वर्ष 8, अंक 4 (अक्टूबर-दिसम्बर 2022), वर्ष 9, अंक 1 (जनवरी-मार्च 2023)

वेबसाइट: www.aifrte.in

अखिल भारत शिक्षा अधिकार मंच

तालीम की लड़ाई

('केजी से पीजी' तक मुफ़्त और समतामूलक शिक्षा का समर्थक और शिक्षा में हर प्रकार के व्यापार का प्रतिरोधी मुखपत्र)

अखिल भारत शिक्षा अधिकार मंच का त्रैमासिक प्रकाशन

संपादकीय

नजरिया

आजाद मुल्क में तालीम हाल-बेहाल 03
उच्च शिक्षा में नीतिगत गिरावट 07

समसामयिकी

पटना के ऐतिहासिक सरकारी उर्दू 09

सरगर्मियाँ 11

संगठन की रपटें/प्रेस विज्ञप्ति

प्री-मैट्रिक वजीफे को बंद करने के खिलाफ 24
तालिबान द्वारा महिलाओं 24
शिक्षण संस्थाओं पर हमले 25
एबीवीपी के गुंडों द्वारा छात्रों पर हमले के विरोध 33
पैगंबर मोहम्मद की पेंटिंग 34

कविता

जे.एन.यू किसी विचारधारा का द्वीप नहीं 36

संपादक
जी शंकर

संपादक मंडल
चतुरानन ओझा (उ.प्रदेश)
फ़िरोज़ (दिल्ली)
लाल्टू (हैदराबाद)
राजेश आज़ाद (दिल्ली)

कवर डिज़ाइन
ओमप्रकाश कुमार (मुज़फ़्फ़रपुर)

संपादकीय संपर्क
ईमेल: taleemkiladai@gmail.com

सहयोग राशि : 20/-

संपादकीय

आज शिक्षा व्यवस्था उस मुक़ाम पर पहुंच चुकी है कि जब सत्ता प्रतिष्ठान से जुड़ा कोई व्यक्ति किसी शिक्षण संस्थान में उपस्थित हो कर आदर्श, नैतिकता, न्याय और संविधान की बात करता है तो वह हास्यास्पद से अधिक विद्रूप लगने लगता है। क्योंकि इन्हीं जिम्मेदार लोगों ने शिक्षा तंत्र को ऐसा बना दिया है कि जहाँ आज इन संस्थानों को बेहतर नागरिक और मनुष्य बनाने, अपने देश-दुनिया-समाज की चिंता करने वाले व्यक्तित्व निर्मित करने की जिम्मेदारी निभानी थी वहीं यह संस्थाएं अपने समाज से कटे हुए खुदगर्ज लोगों का निर्माण कर रही हैं।

शिक्षा के निजीकरण, बाजारीकरण और अंग्रेजीकरण ने शिक्षण संस्थानों को अपने समाज और भाषा से नफरत करने वाले समूह के निर्माण केंद्र में स्थापित कर दिया है।

जैसा कि आज केंद्र और राज्य सरकारों ने निजीकरण-बाजारीकरण के अभियान के तहत सभी सरकारी संस्थानों के विध्वंस की कार्य योजना चलाई हई है, वही शिक्षा के क्षेत्र में भी हुआ है। आज सरकारी एवं सरकारी सहायता-प्राप्त प्राथमिक एवं उच्च शिक्षण संस्थानों, विश्वविद्यालयों पर लगाम लगाकर निजी संस्थाओं को बेलगाम छोड़ दिया गया है। जहां सरकारी कहलाने वाले शिक्षण संस्थानों के शिक्षकों को शिक्षण से विरत रखने के लिए दर्जन भर से अधिक गैर-शैक्षिक कार्यों में उन्हें व्यस्त रखने के कार्यक्रम दे दिए गए हैं, वहीं निजी शिक्षण संस्थानों में अध्यापकों के वेतन, आर्थिक सुरक्षा और छात्रों-अभिभावकों के उत्पीड़न-शोषण पर कोई नियंत्रण नहीं है। निजी संस्थानों में महंगी फीस समय पर नहीं चुका पाने वाले छात्रों को विद्यालय परिसर में सार्वजनिक रूप से अपमानित करने एवं प्रताड़ित करने वाला व्यवहार किया जाता है। अभिभावकों से सूदखोरों के तर्ज पर वसूली की जाती है। इस प्रकार आज की पूरी शिक्षा व्यवस्था उपेक्षा, अपमान और भयानक शोषणकारी तंत्र में परिवर्तित हो चुकी है। एक ऐसा वातावरण जहां बाल और किशोर मन विकास और पोषण नहीं पा सकता। बल्कि यहां से गुजरते हुए उसका विश्वास माननीय मूल्यों, आदर्श और नैतिकता से उठ जाता है।

विगत वर्षों में कोरोना काल में भारत में दुनिया का सबसे कठोर लॉकडाउन लागू किया गया। इस दौरान सभी शिक्षण संस्थाएं भी बंद कर दी गईं और इसी दौरान राष्ट्रीय शिक्षा नीति (राशिनी, NEP) 2020 भी, संसद और विधानसभाओं में प्रस्तुत किए बिना और बहस कराए बग़ैर, लागू कर दी गई। इस नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति को 1991 में लागू की गई नई आर्थिक नीति के उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण के अजेंडे के तहत आर्थिक नवउपनिवेश के रूप में भारतीय समाज पर देशी-विदेशी पूंजी के हमले के क्रम में ही देखा जाना चाहिए।

विगत वर्षों में कोरोना काल में भारत में दुनिया का सबसे कठोर लॉकडाउन लागू किया गया। इस दौरान सभी शिक्षण संस्थाएं भी बंद कर दी गईं और इसी दौरान राष्ट्रीय शिक्षा नीति (राशिनी, NEP) 2020 भी, संसद और विधानसभाओं में प्रस्तुत किए बिना और बहस कराए बग़ैर, लागू कर दी गई। इस नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति को 1991 में लागू की गई नई आर्थिक नीति के उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण के अजेंडे के तहत आर्थिक

नवउपनिवेश के रूप में भारतीय समाज पर देशी-विदेशी पूंजी के हमले के क्रम में ही देखा जाना चाहिए।
1991 के बाद से भारतीय समाज को देशी-विदेशी पूंजी के जिस हमले से गुजरना पड़ा है, उसने शिक्षा जगत में निजीकरण और व्यावसायीकरण के कार्य को लगभग पूरा ही कर दिया था। NEP ने उसे मुकम्मल करते हुए शिक्षा जगत के लोकतांत्रिक और समाजवादी संविधान सम्मत चरित्र को पूरी तरह खत्म कर दिया है और इस क्षेत्र में कॉरपोरेट जगत की तानाशाही को पूरी तरह स्थापित कर दिया है।
1991 के बाद से शिक्षा के क्षेत्र में जिस तरह निजीकरण-ठेकाकरण के तहत सरकारी विद्यालयों में पैराटीचर्स की नियुक्तियां शुरु हुईं, उसके विरोध में समान, पूरी तरह मुफ़्त और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा व्यवस्था की स्थापना के लिए 2009 में अखिल भारत शिक्षा अधिकार मंच की स्थापना हुई थी। इस मंच ने अपने उद्देश्य के तहत राष्ट्रव्यापी अभियान चलाये, यात्राएं आयोजित कीं और 2019 में दिल्ली में हुंकार रैली का आयोजन भी किया गया। जाहिर है, समान, संवैधानिक, समाजवादी शिक्षा की स्थापना की दिशा में चलाए जा रहे आंदोलन के तहत मंच ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति NEP 2020 के पहले प्रारूप के आने के साथ ही इसके खतरनाक, सांप्रदायिक और संविधान विरोधी चरित्र का पर्दाफाश अभियान शुरु कर दिया था। इसके विरोध में पर्चे-पोस्टर निकालकर ऑनलाइन और जमीनी स्तर पर अभियान चलाए गए, सम्मेलन आयोजित किए गए और किए जा रहे हैं।
आज जब राशिनी को देश पर जबरिया थोपा जा चुका है, तब उसके प्रभाव पहले से बदहाल व्यवस्था में कोढ़ में खाज की तरह भयावह रूप में दिखाई देने लगे हैं। लगभग सभी संस्थाओं में इस मुद्दे पर अकादमिक चर्चा-परिचर्चा करने तक पर पूरी तरह रोक लगा दी गई है। छात्रों, अभिभावकों और शिक्षकों में त्राहि-त्राहि मची है, किंतु बिना किसी आधारभूत संसाधनों के इसे सफल बनाना संस्थाओं में बने रहने की शर्त बन गई है। जिनके पास थोड़े भी विकल्प हैं, वो बिना पहिए की गाड़ी दौड़ाने की इस प्रक्रिया से भाग खड़े हो रहे हैं। उत्तर-प्रदेश में ही इस दौरान 4 दर्जन से अधिक अनुमोदित प्राचार्य अपना पद छोड़ कर अध्यापक के रूप में पुरानी संस्थाओं में वापिस जा चुके हैं! ऐसी स्थितियां उत्पन्न हो गई हैं कि न सिर्फ छात्र, बल्कि प्राचार्य तक ड्रॉपआउट हो रहे हैं! NEP 2020, यानी नॉमिनेशन, इवेल्यूएशन और प्रोग्रेशन। इसके तहत शिक्षक ज्यादा महत्व नहीं रखता, सिर्फ रुपया वाला छात्र, बाकी डिजिटल या कॉर्पोरेट्स।
NEP के अंतर्गत स्नातक स्तर पर तीन बार होने वाली परीक्षाएं अब छह बार हो रही हैं। प्रायोगिक परीक्षाओं की तो बहार ही आ गई है। वसूली करने वाले कॉलेज अब तीन बार की बजाय छह बार वसूली कर रहे हैं और अभिभावक/छात्र पिस रहे हैं।
उदाहरण के तौर पर अगर उत्तर-प्रदेश की बात करें, तो यहाँ उच्च शिक्षा में लगभग 95% हिस्सेदारी स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों की है। इन स्ववित्तपोषित संस्थानों में कितने शिक्षक भौतिक रूप से जमीन पर असली रूप में कार्यरत हैं, इसकी जानकारी न कुलपति को है, न शासन को और न प्रशासन को। क्योंकि ऐसे बेचारे अनुमोदित शिक्षकों को वेतन के नाम पर एक नया पैसा न कुलपति महोदय देते हैं, न शासन देता है और न प्रशासन देता है। स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों के शिक्षकों की ऑनलाइन लिस्ट भी विश्वविद्यालयों की वेबसाइट पर अब तक मौजूद नहीं है। इनके अनुमोदित शिक्षकों की किसी शिकायत पर कोई कार्रवाई नहीं होती। पूर्णतः शिक्षक और प्राचार्य विहीन इन महाविद्यालयों में परीक्षाएं जैसे NEP के पहले होती थीं, आश्चर्यजनक रूप से आज भी वैसे ही हो रही हैं। ऐसे कैमरों की निगरानी में हो रही हैं जो आँखें मूँद चुके प्रशासन के निरीक्षण में हैं। पूर्वी उत्तर-प्रदेश के सहायता प्राप्त महाविद्यालयों के स्ववित्तपोषित पाठ्यक्रमों के शिक्षकों की स्थिति भी ऐसी ही है। एक वित्तपोषित कालेज के स्ववित्तपोषित पाठयक्रम के शिक्षकों द्वारा महाविद्यालय द्वारा किए गए सेवा अनुबंध का पालन कराने का आदेश कोर्ट से लाए जाने पर प्रबंधक द्वारा उनका वेतन दस हजार से घटाकर दो से तीन हजार प्रतिमाह कर दिया गया और शिक्षकों को 'आगे देख लेने' की धमकी भी दी गई।
पहले जिस स्तर की धोखाधड़ी बहुत निचले स्तर पर की जाती थी, NEP के बाद वह शीर्ष पर पहुंच चुकी है। सभी स्तर की लोकतांत्रिक संस्थाओं को शिक्षण संस्थानों के संचालन की प्रक्रिया से बाहर किया जा चुका है। आजादी के पहले से "विश्वविद्यालय कोर्ट" विश्वविद्यालयों और समाज के बीच सेतु का काम किया करती थी। समाज के विभिन्न तबकों की नुमाइंदगी इस कोर्ट में हुआ करती थी। यूपी राज्य विश्वविद्यालय अधिनियम 1973 के तहत इसे सलाहकार निकाय बना दिया गया। लेकिन विगत दो दशकों से किसी विश्वविद्यालय ने इस व्यवस्था का भी पालन नहीं किया है।
अभी जनवरी 2023 में नैक मूल्यांकन द्वारा दीन दयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर को नैक ए प्लस प्लस का ग्रेड दे कर उसे जेएनयू और जामिया के बराबर का दर्जा दे दिया गया है। यहाँ नौ हजार से अधिक छात्रों के फ़र्ज़ी ईमेल आईडी और फ़र्ज़ी दस्तावेजों से नैक टीम को भ्रमित करने के आरोप लगे थे। प्रोफेसर द्वारा प्रमाण सहित लगाए गए आरोपों का जवाब दिए बिना विश्वविद्यालय को A++ ग्रेड दे दिया जाना एक चमत्कारिक नतीजा था।
दरअसल वर्तमान में शिक्षा व्यवस्था को जिस तरह असंवैधानिक, अतार्किक और गैर-बराबरी के विभिन्न स्तरों पर संचालित किया जा रहा है, उसे अब मात्र NEP के विरोध और इसके पहले की शिक्षा व्यवस्था की बहाली के लड़ाई के रूप में नहीं लड़ा जा सकता है, बल्कि पूरी तरह नई, समानतामूलक, सरकारी, मुफ्त, धर्मनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक और पड़ोसी स्कूल व्यवस्था की स्थापना की लड़ाई के रूप में ही लड़ा जा सकता है। यह लड़ाई मात्र छात्रों और अध्यापकों के भरोसे भी नहीं लड़ी जा सकती। सभी जिम्मेदार नागरिकों, किसानों-मजदूरों का कर्तव्य है कि इस आंदोलन का हिस्सा बनें। जिससे सामाजिक अन्याय और भेदभाव को आगे बढ़ाने वाली इस परियोजना पर लगाम लगाई जा सके।

सबको शिक्षा एक समान,
ले कर रहेगा हिन्दुस्तान !!

आज़ाद मुल्क में तालीम हाल-बेहाल

लाल्टू

आज़ादी की लड़ाई में जो ख़्वाब देखे गए थे, उनमें हर किसी को उम्दा तालीम भी शामिल है। 1931 में कांग्रेस की कराची महासभा में जो इंकलाबी प्रस्ताव पारित हुए थे, उनमें से तालीम से जुड़ा एक प्रस्ताव भी था। 12वें प्रस्ताव में मुफ्त प्राथमिक शिक्षा की माँग थी। 14 वें में फौज पर खर्च को कम से कम आधा कम कर देने की माँग थी।

देश आज़ाद हुए तीन चौथाई सदी बीत गई। क्या सब को उम्दा तालीम का ख़्वाब पूरा हुआ है? इसका लेखा-जोखा होना चाहिए। यहाँ हम तालीम से जुड़े कुछेक मुद्दों की बात कर रहे हैं। हालात जैसे हैं, उससे मायूस हुए बिना नहीं रहा जा सकता। पर हर तरह के भेदभाव रहित समान स्कूली तालीम की लड़ाई मुल्क के हर कोने में चल रही है, इसलिए उम्मीद बनी हुई है।

आज़ादी के तुरंत बाद से ही तालीम के खित्ते में बजट का छोटा ही हिस्सा आया। चूँकि हिन्द-पाक जंग हो गई तो फौज के बजट में कटौती का सवाल ही नहीं था। फिर 1962 में चीन के साथ जंग हुई तो उसके बाद से लगातार फौज-तंत्र पर खर्च बढ़ता रहा। अर्द्ध-सैनिक बलों और पुलिस पर भी खर्च लगातार बढ़ता रहा। सातवें दशक तक तालीम पर राष्ट्रीय बजट का 6-7% ही खर्च हो रहा था।

संविधान में निर्देशक तत्वों के मुताबिक तालीम पर आयोग बने। राधाकृष्णन आयोग ने ढाँचा से जुड़े सुझाव दिए। शिक्षा नीति पर पहला पुर-असर हस्तक्षेप 1968 में कोठारी आयोग का था, जिसने तालीम पर खर्च लगातार बढ़ाकर सकल घरेलू उत्पाद के 6% तक ले जाने के निर्देश दिए। इस आयोग के निर्देशों को अपना कर राष्ट्रीय शिक्षा नीति बनी, पर तालीम पर खर्च साढ़े तीन-पौने चार प्रतिशत से ज्यादा न बढ़ पाया।

पिछली सदी के आखिरी दशक में नई छूट-वादी नीतियों की वजह से तालीम में निजीकरण तेज़ी से बढ़ा। साथ ही सरकारी खर्च कम होता रहा। आज घरेलू उत्पाद के प्रतिशत के हिसाब में हमारे मुल्क में तालीम पर खर्च दुनिया के सबसे ग़रीब सब-सहारन मुल्कों से भी कम है। एक ओर तो स्तरीय ऊँची तालीम के इदारे बनाने की बात कही जाती है, दूसरी ओर बजट में लगातार कटौती होती रहती है। साथ ही दुनिया की सबसे बड़ी फौज और सबसे बड़ा असलाह आयात करने वाला मुल्क भी हमारा है। सरकारी स्कूलों में बदतर हो रहे हालात के साथ निम्न-मध्य-वर्ग के लोगों में भी बच्चों को निजी स्कूलों में भेजने की प्रवृत्ति पढ़ी। हर कहीं कुछ सरकारी स्कूल बंद होने लगे। आज देश के तीन-चौथाई बच्चे ऊँची तालीम तक पहुँचने का ख़्वाब नहीं देख पाते। सरकारी आँकड़ों के मुताबिक प्राथमिक स्तर पर 90% से ज्यादा भर्ती होती है, पर माध्यमिक स्तर के बाद ही आधे बच्चे स्कूल छोड़ देते हैं, जिनमें लड़कियों की तादाद ज्यादा होती है। तालीम से वंचित जनता में नागरिक अधिकार, वैज्ञानिक चेतना आदि तमाम गुण न आ पाए, जो आधुनिक राष्ट्र के बनने के लिए ज़रूरी हैं। किसी में यह सवाल उठाने की काबिलियत न बन पाई कि ऐसे मुल्क के लिए बड़ा फौज-तंत्र बनाने का क्या तुक है, जहाँ अक्सरीयत मध्य-युग की अँधेरी कोठरियों में फँसी पड़ी है। जाहिर है कि उभरते फासीवाद को ऐसे ही हालात चाहिए थे और इसी के बल पर आखिरकार फिरकापरस्त ताकतों ने न केवल सत्ता हथिया ली, बल्कि संविधान को बदल डालने की क़वायद शुरू कर दी है, जिससे बची-खुची उम्मीद भी नहीं रहती। संघ परिवार की सरकारों ने तालीम में ढाँचा और पाठ-चर्या दोनों स्तरों पर धर्म-निरपेक्षता खत्म कर फिरकापरस्ती बढ़ाने पर ज़ोर डाला।

हर नई सरकार तालीम पर नया आयोग बैठाती रही। हर दशक में नई राष्ट्रीय नीति बनती रही। पिछली सदी के अंत से स्कूली तालीम में मादरी ज़बान की अहमियत कम कर अंग्रेज़ी माध्यम में शिक्षा में बढ़त और पहले से चले आ रहे बनावटी संस्कृतनिष्ठ शब्दावली के वर्चस्व से संज्ञान के स्तर पर ज़हनी गुलामी बढ़ती चली। अब सामान्य आलोचना तक की जगह बचाए रखने की जद्दो-जहद है। हर नई नीति ने गैरबराबरी को बढ़ाया और नतीजतन समाज में संपन्न और ऊँची जाति के तबकों का वर्चस्व फिर से बढ़ने लगा है। प्रस्तावित घरेलू उत्पाद के 6% निवेश की जगह साढ़े तीन प्रतिशत के क़रीब पैसा

लगाने से दशकों से तालीम में माली घाटा बढ़ता रहा है। फिर भी बढ़ा-चढ़ा कर बुनियादी बदलाव की बातें की गईं। विविधता और बराबरी जैसे समावेशी मुहावरों का इस्तेमाल दरअसल बहिष्कार के लिए किया गया और मौजूदा फासीवादी संघी इस फरेब को कलात्मक शिखर तक ले आए हैं। सामाजिक न्याय के बचे-खुचे ढाँचे की तबाही ही इनका मक़सद है। ऊँची तालीम से बहुजन समाज के और ग़रीब तबकों के बच्चों को निकाला जा रहा है। फीसें बेइंतहा बढ़ती जा रही हैं, और छात्रों को बैंक से उधार लेकर सामान्य तालीम लेनी पड़ रही है। आरक्षण से जो भी थोड़ा बहुत फायदा बहुजन समाज के बच्चों को मिल रहा था, वो बढ़ते निजीकरण के साथ बेमानी होता जा रहा है, साथ ही अध्यापकों की नियुक्तियों में कमी और खास तौर पर आरक्षित पदों को न भरने से बहुजन समाज को और ज्यादा हाशिए में धकेला जा रहा है। अध्यापकों से संस्थानों के अंदर बाहर कई तरह के काम करवाए जाते हैं, जिससे पढ़ाई का नुकसान होना लाजिम है। खास तौर से स्कूल के अध्यापक सरकारी अफसरशाही के हाथ गुलाम होते हैं।

'एक राष्ट्र, एक डिजिटल मंच' जैसे खोखले नारे उठाए गए हैं, जिनका मक़सद दरअसल जनता के अधिकांश को ऊँची तालीम से निकाल बाहर करना है। सांस्कृतिक विविधता को नज़रअंदाज़ कर लगातार केंद्रीकरण को बढ़ाया जा रहा है। पाठ-चर्या, सीखने-सिखाने के तरीकों और पढ़ने की सामग्री को केंद्रीय सत्ता के हाथ रखने के लिए 'एक क्लास, एक चैनल'जैसे टी वी प्रोग्राम तय किए गए हैं। स्टॉक-एक्सचेंजों से जुड़ी माली औकात वाली एजेंसियाँ ऑनलाइन पढ़ाई के लिए पाठ-चर्या तय कर रही हैं। दुनिया के सभी मुल्कों, और किसी एक मुल्क के सभी इलाक़ों के लिए एक जैसी सामग्री तैयार कर ये एजेंसियाँ अपना मुनाफा बढ़ाती रहेंगी। हिंदुस्तान जैसे हजारों रंगों के मुल्क में ऐसी सामग्री का इस्तेमाल एक हमले से कम नहीं है, क्योंकि इससे ज्ञान के विविध स्रोतों और समाज, इतिहास, भाषा- संस्कृति, कुदरत और कुदरती साधनों के साथ रिश्तों की विविधताएँ और अनैपचारिक खित्तों से आते ज्ञान के स्रोत नज़रअंदाज़ हो जाएँगे। आलोचनात्मक सोच की जगह पूँजीवाद-फासीवाद की गुलाम और एक-रूपी सोच ले लेगी। कॉरपोरेट घरानों के मुनाफों पर या सत्ता की निरंकुशता पर सवाल उठाना गद्दारी और अपराध माना जाएगा, और ऐसा हाल के सालों में लगातार बढ़ता जा रहा है।

संघ परिवार की सियासत हमेशा से ही पूरी तरह झूठ की बुनियाद पर खड़ी रही है। मसलन कहा जाता है कि मुल्क में ऊँची तालीम तेज़ गति से बढ़ी है, जबकि अभी भी तीन चौथाई बच्चे कॉलेज की पढ़ाई तक नहीं पहुँच पाते हैं। जाहिर है कि राष्ट्रीय बजट का बड़ा हिस्सा जंगी हालात बनाए रखने पर, और जनता के दमन के लिए फौज और अर्द्ध-सैनिक ताकतों पर खर्च करते रहने से हालात इससे बेहतर हो नहीं सकते।

तालीम के हर स्तर पर निजी संस्थानों, और उनमें भर्ती की, तादाद बढ़ती चली है। इससे दो बातें जाहिर होती हैं, एक तो यह कि सरकारें तालीम पर पैसा लगाने से हाथ खींच रही हैं, और दूसरी यह कि निजी संस्थानों में भर्ती मेंशिक्षा के स्तर का कोई पैमाना नहीं रह गया है। हाल की नई शिक्षा नीति में बार-बार 'प्राचीन और चिरंतन भारतीय ज्ञान परंपरा'की बात पर ज़ोर दिया गया है, जिससे ब्राह्मणवादी पूर्वाग्रहों की बू तो आती ही है, साथ ही दूसरी परंपराओं को दरकिनार करने का षड़यंत्र भी साफ दिखता है।

अंग्रेज़ी के बारे में तमाम तरह के झूठ गढ़े गए हैं, जिसकी बदौलत संपन्न वर्गों ने भारतीय भाषाओं में पढ़ने-लिखने को दोयम दर्जे का बना रखा है। आज डिजिटल टेक्नोलोजी का सही इस्तेमाल कहीं हो तो वह मशीनी अनुवाद में है। किसी भी तरह के तकनीकी ज्ञान को भारतीय भाषाओं में पढ़ा-लिखा जा सकता है, बशर्ते अंग्रेज़ी और संस्कृत-परस्ती से बचने की मंशा हो। चीन, जापान, कोरिया और कई यूरोपी मुल्कों में पढ़ाई पूरी तरह मादरी ज़बान में होती है। हमारे यहाँ देशी भाषाओं में पठन-पाठन की सामग्री तैयार करने में कम से कम पैसा लगाया गया है। जाहिर है कि प्रशासन और दीगर खित्तों में भी साथ ही देशी ज़बानों का इस्तेमाल बढ़ाना होगा, पर ऐसा करने पर शोषण और भेदभाव के आधार पर सत्ता पर कब्जा टिका नहीं रह सकता, लिहाजा यह जल्दी नहीं होगा।

आज तक ऊँची तालीम में भी अध्यापक और छात्रों के बीच रिश्ता लोकतांत्रिक नहीं हो पाया है। इस दिशा में अध्यापकों का उचित प्रशिक्षण भी नहीं होता है। लिहाजा छात्रों में जाति-लिंग या जिस्मानी बातों के आधार पर भेदभाव करना और इस पर कोई सज़ा न पाना आज तक आम बात है। स्कूली पढ़ाई में तो यह और भी व्यापक है। विश्वविद्यालयों में कॉलेज की पढ़ाई के लिए ओरिएंटेशन कार्यक्रम आम हैं, पर अध्यापकों को संवैधानिक मूल्यों के प्रति सचेत करना, उनमें बराबरी और इंसाफ की समझ बढ़ाना, ऐसी बातें न केवल नहीं के बराबर हैं, बल्कि अगर कोई छोटा समूह इस तरह की कोशिश

करता है तो उसे शक की नज़र से देखा जाता है। आज़ादी के दो दशकों बाद और सत्तर के जनांदोलनों के असर से एलीट संस्थानों में पश्चिमी मुल्कों की तर्ज पर कुछ हद तक खुलापन बढ़ा था, पर हाल के दशकों में वह भी कम हुआ है और सामंती अफसरशाही किस्म का माहौल बढ़ा है। हर संस्थान में उम्र और व्यवस्था के प्रति वफादारी को ही तरक्की का पैमाना बना दिया गया है। यहाँ तक कि विविधता बढ़ाने या लिंग-समानता आदि की समितियों में भी यही क़ायदे लागू होते हैं। नतीजतन चापलूसी बढ़ी है और मक़सद धुँधले हो गए हैं। जैसे-जैसे नए छूट-वाद के तहत कॉरपोरेट घरानों की ताकत बढ़ी है, तालीम का मक़सद भी ज्ञान पाने या आलोचनात्मक सोच बढ़ाने से हटकर क़ॉरपोरेट मुनाफे के लिए माल उत्पादन की काबिलियत बनता चला है।

सामाजिक-आर्थिक हाल के साथ सामाजिक-भावनात्मक काबिलियत की बात अक्सर होती है। पिछड़े या हाशिया पर खड़े तबकों से आते लोगों में ऐसी काबिलियत कुदरती तौर पर ही मौजूद होती है, जो उन्हें जीवन के मुश्किल तजुर्बों से मिलती है।ऊँची तालीम के संस्थानों में सामाजिक माहौल उन्हें असुरक्षित कर देता है, जैसे कि अब रोहिता वेमुला कांड के बाद हर कोई जान चुका है। लिहाजा झूठे मुहावरों से भरी नीतियों से नहीं, तालीम में बुनियादी बदलाव ईमानदार मंशाओं से होगा, जिसकी तवक़्क़ो फासीवादी अन्सरों की सरकार से क़तई नहीं की जा सकती है। संघ परिवार की सरकार आँगनवाड़ी से ही पोषण जैसे सवालों को नज़रअंदाज़ कर तीन से आठ साल के बच्चों को योग सिखाने चली है कि उनकी सामाजिक-भावनात्मक काबिलियत बढ़ेगी। यह महज एक बीमारी है जिससे फासीवादी सोच ग्रस्त है।

पिछले कुछ दशकों से पढ़ाई और सुविधाओं के स्तर के मुताबिक संस्थानों के अक्रेडिटेशन यानी मान्यता के पैमाने बनाए गए हैं। अगर समाज में गैरबराबरी को नज़रअंदाज़ करें तो यह बात बड़ी अच्छी लगती है कि स्तर का मूल्यांकन हो रहा है। आज इस प्रक्रिया में वरिष्ठता को ध्यान में रख कर मूल्यांकन करने वालों को चुना जाता है, यानी यह वरिष्ठों द्वारा कनिष्ठों का मूल्यांकन जैसा हो गया है, जबकि होना यह चाहिए कि पीअर-रीविउ यानी समकक्ष शिक्षाविदों द्वारा मूल्यांकन हो। अक्रेडिटेशन करने वालों को खुश करने के लिए संस्थानों में जम कर तैयारी की जाती है। अध्यापकों और दीगर कर्मचारियों का बहुत सारा वक्त और संसाधन इसमें जाया होते हैं। अब ऐसे सुझाव आ रहे हैं कि अक्रेडिटेशन करने वालों के अक्रेडिटेशन के लिए भी संस्था बनाई जानी चाहिए! जब तालीम के लिए पर्याप्त माली संसाधन ही नहीं है, अध्यापकों और कर्मचारियों के पद बड़ी तादाद में खाली पड़े हैं, तब इस तरह की फिज़ूलखर्ची का क्या मतलब है?

संघी सरकार की नीति में ऊँची तालीम के संस्थानों के बीच पहले से मौजूद भेदभाव को बढ़ाया जा कहा है। यह प्रस्ताव है कि संस्थानों को समूहों में समेटा जाए और एक बहुविषयक शिक्षा और शोध की विश्व-स्तरीय यूनिवर्सिटी बनाई जाए। यानी अभी मौजूद विश्वविद्यालयों को धीर-धीरे महज पढ़ाने के काम रखा जाए और शोध को सीमित किया जाए। यह ऊँची तालीम की तबाही को पुख्ता करने की ओर लिया गया कदम होगा, क्योंकि स्तरीय अध्यापन के लिए निरंतर शोध ज़रूरी है, चाहे वह नया ज्ञान पैदा करे या न करे। यह शोध व्यापारिक हितों से आज़ाद और पूरी तरह जानकारी बढ़ाने के मक़सद से किया जाना चाहिए। जिन समूहों की बात कही गई है, वे कैसे होंगे, इस बारे में कोई साफ समझ सामने नहीं आई है। कॉलेजों में शोध कार्य के हालात पहले ही शोचनीय हैं और आगे और बिगड़ने की ही संभावना है। यह सब कुछ विपन्न वर्गों से आए छात्रों को स्तरीय ऊँची तालीम से अलग रखने के तरीके हैं। संस्थान विकास योजना के लिए बाहरी सलाहकारों को तालीम के प्रशासनिक इदारों में लाना दरअसल संघ परिवार का सीधा हस्तक्षेप है। पहले सियासी हस्तक्षेप परोक्ष रूप से होता था, पर इसमें संस्थानों के सीनेट-सिंडिकेट जैसे अंदरूनी ढाँचे के जरिए कुछ हद तक रोक थी। अब यह प्रत्यक्ष रूप से केन्द्रीय फैसलों से तय होगा और इस पर कोई रोक नहीं लग सकती। बेशक संस्थानों में भ्रष्टाचार है, पर इसका हल भ्रष्ट किरदारों को सही सज़ा देना है, पर संघ परिवार के अपने दूरगामी मक़सद हैं। तकलीफ इस बात की है कि ज्यादातर दक्षिणपंथी वैचारिक स्तर पर खोखले होते हैं। ऐसे लोग विश्वविद्यालयों में फैसलाकुन पदों पर आ गए, तो संस्थानों का बेड़ा गर्क होना तय है।

डिग्री पूरी करने के अलग-अलग विकल्पों के भी प्रस्ताव हाल के दशकों में आए हैं। इस की हर ओर आलोचना हुई है। जाहिर है जो कमतर डिग्रियाँ लेकर पढ़ाई छोड़ देंगे, उनको अच्छी नौकरियाँ नहीं मिलेंगी और आगे पढ़ने के मौके भी नहीं मिलेंगे। ऐसी डिग्री आखिरकार बेकार ही साबित होगी। हर दूसरी ग़लत बात की तरह संघी सरकार द्वारा इसे उदारवादी नज़रिया कहा जा रहा है, जबकि दरअसल यह वंचितों के हितों के खिलाफ है। पेशे के लिए पढ़ाई और स्किल-बेहतरी के मुहावरे शक के दायरे से छूट नहीं सकते। इसके पीछे भी मक़सद यह है कि कमज़ोर तबकों के युवाओं को कमतर पेशेगत

प्रशिक्षण देकर उन्हें कम आय वाली नौकरियों में धकेल दिया जाए। नीति का दस्तावेज भी यही कहता है कि 2050 तक ही सभी छात्रों को एक सी पेशेगत तालीम मिलेगी। उसके पहले तक कुछ ही छात्रों के लिए ऐसा किया जाएगा। स्किल के बारे में केंद्रीय खाका सोचा गया है और विविधता की परवाह किए बिना हर कहीं केंद्रीय खाके से साथ संगति रखने की तवक़्क़ो है। हद है कि स्किल की जानकारी बगैर ही केंद्रीय खाके के साथ संगति की बात हो रही है! क्या इस तरह से छात्रों को जाति आधारित पेशे चुनने को मजबूर नहीं किया जा रहा है?

सबसे चिंताजनक बात तालीम में नई टेक्नोलोजी लाने की है। सुविधासंपन्न तबके ए आई (आर्टीफिशियल इंटेलिजेंस), ब्लॉक चेन, मशीन लर्निंग, स्मार्ट-बोर्ड, कंप्यूटर, तालीम के सॉफ्टवेयर, आदि अल्फाज़ सुनकर बड़े खुश होते हैं। एकबारगी ऐसा लगता भी है कि नई टेक्नोलोजी का पूरा फायदा बेहतर तालीम के लिए उठाया जाना चाहिए। पर जहाँ सरकारी स्कूल की फीस तक देने लायक पैसे बच्चों के पास नहीं है, स्कूल जीर्ण-शीर्ण दशा में टिके हुए हैं, वहाँ ये सब न केवल बेमानी हैं, बल्कि एक क्रूर मजाक सा लगते हैं। अगर समान स्कूली व्यवस्था हो, हर बच्चे को एक सी तालीम मिले (विविध पाठ-चर्या के साथ), तो जहाँ भी टेक्नोलोजी का हस्तक्षेप हो सके, वह बढ़िया है। पर होगा यह कि निजी स्कूल ऊँची फीस लेकर कुछ मशीनों का इस्तेमाल करेंगे, नवोदय या केंद्रीय-विद्यालयों में भी कुछ सुविधाएँ आ जाएँगी, पर सामान्य सरकारी स्कूलों में एक दो कंप्यूटर आकर आलमारियों में बंद रहेंगे। यह हमारे मुल्क की सच्चाई है। इसलिए समान स्कूली व्यवस्था की बात किए बिना टेक्नोलोजी की बात करना भेदभाव बढ़ाना है। ऊँची तालीम में सेंटर-ऑफ-एक्सेलेंस की संस्कृति को बढ़ावा देने की बात है, जिससे टेक्नोलोजी तक पहुँच बना पाने में भेदभाव बढ़ता ही रहेगा। भयंकर गैरबराबरी वाले समाज में ए आर (ऑगमेंटेड रीआलिटी), वी आर (वर्चुअल रीआलिटी), एम आर (मिक्स्ड रीआलिटी), ऐनिमेशन, गेमिफिकेशन, तीन-आयामी-विज़ुअल, आदि खोखले अल्फाज़ हैं। तालीम में देशी-विदेशी कॉरपोरेट हस्तक्षेप बढ़ता चला है। विदेशी विश्व-विद्यालय यहाँ मुनाफाखोरी के लिए कैंपस खोल तो सकते हैं, पर ऊँचे स्तर का शोध नहीं करवाएँगे। ऐसी जगह पढ़ने वाले कुछ छात्र विदेशों में शोध करने के लिए चले जाएँगे और इस तरह देशी प्रतिभा को हम खोते रहेंगे, और बाक़ी महज कामगार भर रह जाएँगे। विदेशी ठप्पा लगाने के लिए मध्य-वर्ग के माँ-बाप बैंकों से लोन ले-लेकर बच्चों को इन संस्थानों में पढ़ाएँगे, और देश की बाक़ी जनता दूर से इन्हें देखती रहेगी। बड़ी जनसंख्या के अनुपात में ज़मीन की कमी भी विदेशी संस्थानों के कैंपस खोलने पर सवाल खड़ा करते हैं - क्या खेती की ज़मीन इन कैंपसों के लिए बेच दी जाएगी? ऐसे विदेशी संस्थानों के लिए कर में बड़ी राहत की योजनाएँ भी बन रही हैं। सोचना लाजिम है कि क्या ऐसी नीतियाँ बनाने वाले इसी देश के नागरिक हैं या वे किसी विदेशी संस्थान के एजेंट हैं?

शोध की दशा और दिशा तय करने के लिए भी राष्ट्रीय शोध संस्थान की बात सोची गई है। ऐसा लगता है कि सरकार नए संस्थानों के नाम सुनाकर पिछड़ेपन और बदहाली के भूतों को भगा देना चाहती है। अमेरिका के राष्ट्रीय विज्ञान फाउंडेशन की अहमियत एक अनुदान देने वाले संस्थान के रूप में है। वहाँ शोध की दशा और दिशा शोध करने वाले तय करते हैं, पर हमारे यहाँ कहा जा रहा है कि राष्ट्रीय संस्थान के जरिए मौजूदा ढाँचा में बिखराव को समेटा जाएगा और एक नया एकीकृत ढाँचा तय होगा। यह समेटना आखिर क्या होगा? राष्ट्रीय संस्थान ऐसा क्या करेगी जो मौजूदा राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं आदि के जरिए नहीं हो रहा है?इन सब बातों का मक़सद क्या बुनियादी समस्याओं से हमारी नज़र हटाना है?

सारांश यह कि आज़ादी के 75 साल बाद तालीम के हाल ऐसे हैं कि कहना मुश्किल है कि हम वाक़ई आज़ाद हैं या नहीं। यह सही है कि आज सरकारी स्कूलों में प्राथमिक स्तर पर तालीम मुफ्त है। पर इन स्कूलों का हश्र कैसा है, इस पर जितना कम कहें, बेहतर। आज बहस की जगह भी कम होती जा रही है, लिहाजा बड़ी लड़ाई उस ज़मीन को लाने की है, जहाँ खड़े होकर हम तालीम और सेहत जैसे मुद्दों पर मानीख़ेज़ बहस कर पाएँ और इसके लिए हर कहीं फिरकापरस्त ताकतों के साथ लोहा लेने की ज़रूरत है।

'उद्भावना' से साभार

उच्च-शिक्षा में नीतिगत गिरावट: एक भूतपूर्व शिक्षक की आँखों देखी

डॉ असीम सत्यदेव

मैं खुद को खुशकिस्मत समझता हूँ कि मौजूदा राष्ट्रीय शिक्षा नीति के लागू होने से पहले ही 30 जून 2020 को मेरी सेवा समाप्त हो गयी। जो विकृत रूप उच्च शिक्षा का बन रहा है वैसा मेरी कल्पना से परे था। जुलाई 2020 से यह फरमान आया कि विश्वविद्यालय और महाविद्यालयों के समस्त शिक्षकों के दस्तावेजों की जांच होगी। इसके लिए टीमों का गठन होगा जिसमें शिक्षक और अधिकारी होंगे। यह फरमान देखते ही मेरे मन मे सवाल उठा कि जब हर तीसरे महीने और कभी-कभी तो हर महीने शिक्षकों की समस्त शैक्षणिक योग्यता, सेवा काल, पदोन्नती, वेतन-वृद्धि इत्यादि का लेखा-जोखा लिया जाता रहा है, जब भी नया वेतनमान मिलता है तो सारे रिकॉर्ड देखे ही जाते रहे हैं, तब इस कवायद का क्या मतलब है! फिर देखा कि जांच टीम में कनिष्ठ शिक्षक और अधिकारी रखे गये हैं जिनके सामने शिक्षकों को सारे दस्तावेज पेश करने हैं। मैंने इस अपमानजनक सलूक के बारे मे साथ ही रिटायर हुए विश्वविद्यालय शिक्षकों से बात की तो उन्होंने क्षोभ भरे स्वर में कहा कि गनीमत जानो लेखपाल और चपरासी जांच के लिए नहीं भेजे गये। हम लोग अच्छे समय में रिटायर हुए, आगे-आगे देखो क्या-क्या होता है। उनकी आशंका सही साबित हुई। बिना विद्यार्थियों की सलाह लिए, बी.ए, बी.कॉम, बी.एस.सी की परीक्षा हर छः महीने बाद लेने का फैसला लिया गया। साहित्यिक-सामाजिक विषयों मे प्रोजेक्ट तैयार करने का फरमान जारी हुआ। न तो शिक्षक और न ही विद्यार्थियों को पता था कि ऐसा होगा। जो पढ़ेगा न तो वह तय करेगा कि कैसी पढ़ाई हो, न ही पढ़ाने वाला तय करेगा कि कैसी शिक्षा दी जाये, बल्कि जो न पढ़ेगा और न पढ़ायेगा, बस शिक्षा से खेलेगा, उसे ही फैसला लेने का अधिकार दिया गया कि किसे, कब, क्या पढ़ाया जाये तथा कब परीक्षा ली जाये। फलस्वरूप, विसंगतियों का सैलाब आ गया। कोढ़ में खाज के रूप में कोरोना बीमारी का प्रकोप हुआ। अब जब दिमाग में आया, तब बिना परीक्षा के अगली कक्षा मे पहुंचा दिया, कभी परीक्षा लेने का फरमान सुना दिया, कभी आधी परीक्षा का फरमान जारी हो गया। शिक्षकों को दस बजे से शाम चार बजे तक परिसर में रहना जरूरी कर दिया गया। ऐसा तो घोषित आपातकाल के उन्नीस महीनों में, यानी इंदिरा गांधी के शासन में भी, नहीं हुआ था। उल्टी-सीधी परीक्षा, अराजकता भरे परीक्षा परिणाम, स्थायी शिक्षकों की लगातार घटती संख्या, सब कुछ देखा। आगे शिक्षा की तबाही का कौन-सा नजारा मौजूदा नीति दिखा दे, पता नहीं।

इन विसंगतियों के सैलाब में दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर में नैक टीम आयी और सब कुछ जांच कर विश्वविद्यालय को A++ ग्रेड प्रदान कर दिया। उनके मूल्यांकन का व्याकरण उनको ही पता है, फिलहाल तो कुलपति सहित विश्वविद्यालय परिसर में खुशी की लहर चल रही है। भारत की विशाल आबादी को शिक्षा से दूर रखने का निहायत ही भद्दा, क्रूर रूप राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के रूप में आया है। ऐसा कोई रातों-रात नहीं हुआ है। 1986 में जारी नयी शिक्षा नीति और 1992 में नयी आर्थिक नीति में शिक्षा के निजीकरण की प्रक्रिया की सिफारिश थी, अध्यापक से सीधे शिक्षा लेने के बजाय दूर से टेलीविजन इत्यादि के जरिए शिक्षा देने का प्रस्ताव था। इन्हें लागू करते हुए कुकरमुत्ते की तरह स्ववित्तपोषित महाविद्यालय खुलते गये। फीस बढ़ाने का सिलसिला चलता रहा। शिक्षक सस्ते मजदूर की तरह रखे जाते रहे। निजी क्षेत्र में शिक्षा को मुनाफा कमाने के साधन के रूप में इस्तेमाल करने का काम बढ़ता रहा। इनसे आयी विसंगतियों का आकलन करने के बाद होना तो यह चाहिए था कि यह प्रक्रिया रोक दी जाती, लेकिन हुआ इसका उल्टा। कारपोरेट जगत शिक्षा की निजीकरण की प्रक्रिया को कछुआ गति से चलता हुआ मान रहा था और असंतुष्ट था। इसे खरगोश की गति से लागू करवा कर पूरी शिक्षा-व्यवस्था अपने हाथों में लेना चाहता था। मौजूदा राष्ट्रीय शिक्षा नीति इसी का साधन है। आई आई टी समेत हर वैज्ञानिक संस्था में कारपोरेट घरानों के मुताबिक शोधकार्य, सरकारी शिक्षण संस्थाओं तक में स्थायी के बजाय ठेके पर शिक्षकों की नियुक्ति, अनुदान में भारी कटौती आदि का काम तेजी से लागू किया जा रहा है। देश के सारे विश्वविद्यालयों में एक साथ प्रवेश परीक्षा किया गया। यह नीति पूरी तरह से गरीब ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों को शिक्षा से काट देने की साजिश तो है ही, इसके साथ ही यह विश्वविद्यालयों की स्वायत्तता खत्म करने का जरिया भी है। कोरोना काल में हमने देखा कि निजी स्कूल मे पढ़ाई न होने के कारण शिक्षकों को वेतन नहीं दिया गया और दूसरी ओर ऑनलाइन शिक्षा प्रदान करने के नाम पर फीस पूरी ली गयी। अब स्थायी रूप से ऑनलाइन शिक्षा को लागू किया जा रहा। इसमें शिक्षकों की संख्या में भारी कटौती होगी और कम्प्यूटर, स्मार्ट फोन से वंचित तथा नेटवर्क आधा-अधूरा चलने वाले इलाकों के विद्यार्थियों को शिक्षा से वंचित होने की पूरी व्यवस्था है। अभी हालत यह है कि आमने-सामने बैठकर पढ़ाई करने पर भी विद्यार्थियों को विषय समझने में कठिनाई रहती है। दूर से पढ़ाई होने पर कौन कितना

समझ पायेगा, सोचने की बात है। इस शिक्षा नीति का व्यापक विरोध होगा इसका अन्दाजा हुकूमत को रहा है। इसलिए छात्र संघ का गठन नहीं होने दिया जा रहा है और साथ ही शिक्षकों के अधिकारों पर भी नकेल कसी जा रही है। इस तरह न तो पढ़ने वाला और न ही पढ़ाने वाला तय करेगा कि शिक्षा कैसे दी जाये, बल्कि शिक्षा को मुनाफे के साधन बनाने वाला तय करेगा कि किसे क्या पढ़ाया जाये।।

सामाजिक विषयों के पाठ्यक्रम से वैज्ञानिक समझ को निकालना, अंधविश्वास को बढ़ावा देना भी इस राष्ट्रीय शिक्षा नीति का अभिन्न अंग है। इतिहास सुधारने के नाम पर वैज्ञानिक ऐतिहासिक नजरिये के बजाय पुराण और इतिहास का घालमेल किया जा रहा है, अंग्रेजपरस्त लोगों को स्वाधीनता सेनानी बनाने और क्रांतिकारी विचारधारा को गायब करने का पाठ्यक्रम तैयार किया जा रहा है। संस्कृति के नाम पर पतित सामंती मूल्यों और साम्प्रदायिक नजरिये को परोसा जा रहा है। जनता के दिलो-दिमाग से वैज्ञानिक समझदारी गायब करना इसी नीति का हिस्सा है। मौजूदा ताज़ातरीन बजट में शिक्षा के सरकारी अनुदान में की गई कटौती भी इस शिक्षा नीति के अनुसार है। जो लोग आमतौर पर आगामी लोकसभा चुनाव को ध्यान में रखते हुए लोकलुभावन बजट आने की उम्मीद कर रहे थे उन्हें भी निराशा हाथ लगी। मौजूदा हुकूमत को साम्प्रदायिक साधन पर इतना यकीन है कि वह समझती है कि जब हिन्दू-मुस्लिम करके, जाति-उपजाति करके चुनाव जीता जा सकता है, तो जन कल्याण की जरूरत नहीं है, बस जनता को वैज्ञानिक समझ से दूर कर सांप्रदायिक रंग में रंग दिया जाये। शिक्षा का पाठ्यक्रम कुछ ऐसा ही बनाने का काम हो रहा है।

हुकूमत की वाहवाही बटोरने वाले नैक परीक्षण में A++ हासिल करने वाले दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर में राष्ट्रीय शिक्षा नीति के प्रयोग से यह बात आइने की तरह साफ हो गई है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति की दिशा क्या है। पढ़ाई, परीक्षा में विसंगतियों का कीर्तिमान, शिक्षकों की दयनीय हालत ही गुणवत्ता का सूचक बन गयी है।

(पूर्व प्राचार्य, संत विनोबा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, देवरिया)

पटनाः ऐतिहासिक सरकारी उर्दू लाइब्रेरी के गिराए जाने के साथ एक विरासत भी ख़त्म हुई

अली फ़राज़ रिज़वी

बिहार की राजधानी पटना की विरासत को ख़त्म किए जाने और शहरवासियों की ख़ामोशी इस सच्चाई को उजागर करती है कि अब किसी को इतिहास की परवाह नहीं है। साल 2022 के जाते जाते लोगों की नज़रों के सामने पटना शहर की विरासत भी ख़त्म कर दी गई। अशोक राजपथ रोड पर स्थित भारत की एकमात्र सरकारी उर्दू लाइब्रेरी को ज़मीनदोज़ कर दिया गया। ख़ुदा बख़्श ओरिएंटल पब्लिक लाइब्रेरी और बिहार उर्दू अकादमी, पटना की सरकारी उर्दू लाइब्रेरी या बिहार उर्दू लाइब्रेरी के बगल में स्थित ये इमारत देश की आज़ादी से पहले से ही साहित्य का केंद्र था। 1938 में इसकी स्थापना के बाद से यह अख़बारों और पत्रिकाओं की एक विस्तृत श्रृंखला के संग्रह के लिए यह जाना जाता रहा है। बिहार उर्दू लाइब्रेरी में 40,000 से अधिक दुर्लभ पांडुलिपियों और पुस्तकों के होने की बात कही जाती रही है।

गिराए गए इस सरकारी लाइब्रेरी का मलबा मेन रोड से दिखता था लेकिन पूरी तरह इसे नज़रअंदाज़ कर दिया गया। यह आश्वासन दिया गया है कि सरकार इस उर्दू लाइब्रेरी की पुस्तकों और पत्र पत्रिकाओं समेत अन्य चीजों को एक नए भवन में स्थानांतरित कर देगी। हालांकि, यह राष्ट्रीय आंदोलन के बड़े व्यक्तित्व के लिए स्मरण की इस एकमात्र स्थल को पुनर्स्थापित नहीं कर पाएगा जिन्होंने इस पुस्तकालय के लिए अपना योगदान दिया था। इमारत गिराए जाने को लेकर शोर शराबा करने वाले केवल वे ही लोग हैं जो फ्लाईओवर और मेट्रो परियोजना के लिए रास्ता बनाने के लिए ख़ुशी मनाते हैं। इस बार उर्दू प्रेस में भी बिहार उर्दू लाइब्रेरी को गिराने को लेकर कोई चर्चा नहीं है। बिहार विधानसभा पुस्तकालय समिति द्वारा तैयार की गई एक रिपोर्ट के अनुसार, बिहार में 1950 के दशक में मौजूद 541 पुस्तकालयों में से केवल 51 पुस्तकालय बचे हैं।

औसतन, बिहार सरकार अपने बजट का 0.01% पुस्तकालयों को आवंटित करती है। बजट में ये कमी इस बात का संकेत देती है कि अधिकारियों के लिए पढ़ाई लिखाई कितना महत्वपूर्ण है। राजधानी पटना पहले ही अपने बहुसांस्कृतिक अतीत और विरासत का एक बड़ा हिस्सा खो चुकी है। इस नुक़सान को ध्यान में रखते हुए, हमें शहर के अतीत से जो कुछ अब तक बचा हुआ है उसे ज़रूर बचाना चाहिए। इतिहास के बेहद अहम और अपूरणीय प्रवेश द्वार के रूप में जाने जाने वाले पुस्तकालयों को हर क़ीमत पर संरक्षित किया जाना चाहिए। हालांकि, मौजूदा पुस्तकालयों की स्थिति, विशेष रूप से उर्दू पुस्तकों और पांडुलिपियों वाले पुस्तकालयों की स्थिति चौंकाने वाले हैं।

सिर्फ़ किताबें और साहित्य ही नहीं, भाषा भी आज ख़तरे में है क्योंकि दक्षिणपंथी शक्तियां भारत की भाषाई विविधता पर हमला कर रही हैं। बिहार 87 लाख से अधिक लोग उर्दू बोलने वाले हैं लेकिन इस बड़ी आबादी के पास बिहार के पहले शिक्षा मंत्री बैरिस्टर डॉ सैयद महमूद द्वारा स्थापित पुस्तकालय के अलावा कोई पुस्तकालय नहीं है। यहां तक कि बिहार उर्दू लाइब्रेरी भी इस क्षेत्र में उनके कई योगदानों में से एक था। इसका महत्व और भूमिका स्वतंत्रता के लिए भारत के संघर्ष तक फैली हुई है। महान स्वतंत्रता सेनानी और वकील मज़हर-उल-हक़ के दामाद महमूद को ब्रिटिश विरोधी राजनीतिक गतिविधियों के लिए अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय से निष्कासित कर दिया गया था। वे कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में क़ानून की पढ़ाई करने के लिए चले गए। उन्होंने जर्मनी से पीएचडी की डिग्री हासिल की और स्वतंत्रता संग्राम में शामिल होने के लिए भारत लौट आए।

होम रूल आंदोलन, असहयोग आंदोलन और ख़िलाफ़त आंदोलन के दौरान भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के एक सक्रिय सदस्य महमूद जवाहरलाल नेहरू के साथ अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के उप महासचिव बने। मुस्लिम लीग के विरोध की एक मज़बूत आवाज़ रहे महमूद और डॉ. एमए अंसारी ने कांग्रेस पार्टी के भीतर मुस्लिम राष्ट्रवादी पार्टी की नींव रखी। 1937 तक

महमूद इसके महासचिव थे और इसी साल वे श्रीकृष्ण सिन्हा के नेतृत्व वाली बिहार सरकार में शिक्षा, विकास और योजना मंत्री बने।

कई मौक़ों पर महमूद ने सांप्रदायिकता और जातिवाद पर कांग्रेस पार्टी से असहमति जताई। उर्दू और हिंदी बोलने वालों के बीच बढ़ती खाई से बेहद निराश होकर उन्होंने सामाजिक और राजनीतिक स्तर पर विभाजन का मुक़ाबला करने के लिए द्विभाषी समाचार पत्र 'रौशनी' लॉन्च किया।

मंत्री के रूप में अपने कार्यकाल के दौरान उन्होंने "देहात सुधार" विभाग की स्थापना की जिसमें उन युवाओं को नियुक्त किया गया जिन्होंने स्वतंत्रता की लड़ाई में भाग लिया और ब्रिटिश दमन के कारण बेरोज़गार हो गए। द्वितीय विश्व युद्ध के कारण जैसे ही महमूद ने अन्य मंत्रियों के साथ इस्तीफ़ा दिया ब्रिटिश सरकार ने इस विभाग को ख़त्म कर दिया।

वह बिहार के प्रत्येक ज़िले में एक लाइब्रेरी स्थापित करना चाहते थे। हालांकि, मुस्लिम लीग और अंग्रेज़ों के विरोध के कारण उन्हें इस योजना को पटना शहर तक ही सीमित रखने के लिए मजबूर होना पड़ा। ज़िला पुस्तकालयों को स्थापित करने के बजाय महमूद ने इस शहर को अपना पहला और एकमात्र सरकारी उर्दू लाइब्रेरी दिया। अशोक राजपथ पर बिहार उर्दू पुस्तकालय की इमारत को शहर के बुनियादी ढांचे के लिए रास्ता बनाने के लिए चुपचाप तरीक़े से बुलडोज़र चला दिया गया। यह भारत के स्वतंत्रता संग्राम के बड़े व्यक्तित्व को याद करने वाली एकमात्र इमारत थी। इसके विध्वंस और शहरवासियों की ख़ामोशी इस सच्चाई को उजागर करती है कि अब किसी को इतिहास की परवाह नहीं है।

सरकार ने ख़ुदा बख़्श ओरिएंटल पब्लिक लाइब्रेरी या सुल्तान पैलेस के एक हिस्से को गिराने का भी फ़ैसला किया था, लेकिन सौभाग्य से व्यापक विरोध प्रदर्शन ने इसे बचा लिया। अब बिना हो हल्ला के बिहार के इस उर्दू लाइब्रेरी की इमारत को गिरा दिया गया है।

देश को अपना जीवन और करियर समर्पित करने वाले एक व्यक्ति के योगदान को याद करने और संरक्षित करने के बजाय मुख्यमंत्री नीतीश कुमार के नेतृत्व वाली बिहार सरकार ने भारत की आज़ादी के 75 वें वर्ष में उनके नाम को मिटा दिया और उनके योगदान को मलबे में तब्दील कर दिया। अध्यक्ष और अधिकारियों के बिना बिहार उर्दू लाइब्रेरी अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रहा था। सरकार ने कहा है कि इस लाइब्रेरी को नए भवन में स्थानांतरित किया जाएगा। निश्चित ही मंत्री और अधिकारी नए परिसर का उद्घाटन करेंगे, लेकिन इस प्रक्रिया में महमूद की विरासत मिट जाएगी। ऐसा इसलिए है क्योंकि यदि राज्य सरकार ने इस तरह की मांगों पर ध्यान दिया होता तो मूल इमारत को संरक्षित, पुनर्जीवित और नवीनीकृत किया जा सकता था।

इस लाइब्रेरी के विध्वंस को मुसलमानों के ख़िलाफ़ लगातार होने वाले सामाजिक-राजनीतिक हमलों से अलग नहीं किया जा सकता है। भारत के मुसलमानों को निरंतर घुसपैठिए और बाहरी कहा जाता है, भारत के विभाजन के लिए जिम्मेदार ठहराया जाता है, और उनके योगदान को दरकिनार कर दिया जाता है। इसीलिए बिहार उर्दू लाइब्रेरी के विध्वंस को संघ परिवार के मुस्लिम योगदान और विरासत को दरकिनार करने के एजेंडे के अनुरूप एक प्रोजेक्ट के रूप में देखा जाएगा। मुख्यमंत्री और उनका जनता दल (यूनाइटेड) ख़ुद को अल्पसंख्यक समुदाय के हितैषी के रूप में कितना भी पेश करे उनकी हरकतें उनकी असली मंशा को उजागर करती हैं।

बिहार के मुख्यमंत्री ने विकास की जो धारणा रखी वह सतही है। पटना की बहुसांस्कृतिक विरासत की क़ब्रिस्तान पर बिहार की नई सड़कें बन रही हैं। नए सरकारी पुस्तकालयों को खोलने या मौजूदा पुस्तकालयों को बेहतर करने के बजाय, सरकार जो कुछ भी मौजूद है उसे नष्ट करने, ध्वस्त करने और मिटाने पर आमादा है। जानबूझकर उपेक्षित अतीत की इन कहानियों और विरासतों को उनकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के बिना फिर से नहीं बनाया जा सकता है।

(लेखक रंगमंच कलाकार व एक्टिविस्ट हैं और प्रिवेंटिव कन्ज़र्वेशन के छात्र हैं। विचार व्यक्तिगत हैं।)

साभार: न्यूज़क्लिक

राज्यों से

मध्य अक्टूबर में **कर्नाटक** के तीन ज़िलों - बीदर, उत्तर कन्नड़ व कोलार - के सरकारी सहायता-प्राप्त रिहाइशी स्कूलों में आरएसएस ने नौ दिवसीय प्रशिक्षण शिविर शुरु किए। इसकी प्रतिक्रिया में दलित संघर्ष समिति, दलित सेने, दलित संघ, अंबेडकर यूथ असोसिएशन आदि संगठनों ने इन ज़िलों में एकजुट होकर एक सप्ताह तक अपना विरोध दर्ज किया। बीदर में राजकुमार मूलभारती के नेतृत्व में 500 से अधिक लोगों ने उपायुक्त के दफ़्तर के बाहर प्रदर्शन किया और सरकार पर समाज में धर्म के आधार पर वैमनस्य फैलाने की कोशिश करने का इलज़ाम लगाते हुए ज्ञापन सौंपा। इन संगठनों का कहना था कि युवाओं को प्रशिक्षण देने के बहाने आरएसएस उनके दिलो-दिमाग़ में नफ़रत का ज़हर घोलने का काम करता है। इन संगठनों ने कर्नाटक के समाज कल्याण मंत्री कोटा श्रीनिवास पुजारी को इस तरह की असंवैधानिक अनुमति देने का क़सूरवार ठहराया। कोलार में भी दलित सेने, दलित संघर्ष समिति आदि के नेतृत्व में 500 से अधिक लोगों ने उस स्कूल तक विरोध में जुलूस निकाला जहाँ यह शिविर आयोजित किया जा रहा था। संगठनों ने प्रशासन से सवाल किया कि जब दलित संगठनों के कार्यकर्ताओं को कार्यक्रम आयोजित करने की इजाज़त नहीं दी जाती है तो फिर आरएसएस को अनुमति क्यों दी गई। उत्तर कन्नड़ में पुलिस ने प्रदर्शनकारियों को स्थिति के तनावपूर्ण हो जाने का हवाला देते हुए चले जाने को कहा। दक्षिण बीदर से जद (एस) के विधायक बंडप्पा काशेमपुर ने आरएसएस के इन शिविरों के ख़िलाफ़ मुख्यमंत्री को पत्र लिखा, जबकि दल की छात्र इकाई ने अंबेडकर सर्कल से उपायुक्त कार्यालय तक विरोध में जुलूस निकाला तथा शिविर की अनुमति देने वाले प्रशासनिक अधिकारियों को निलंबित किए जाने की माँग करते हुए ज्ञापन सौंपा।
अक्टूबर के अंत में जन सूचना विभाग ने 23 सितंबर को जारी अपना वो आदेश वापस ले लिया जिसमें स्कूलों को 7 लेखकों के पाठ नहीं पढ़ाने के लिए कहा गया था। 28 अक्टूबर के आदेश का औचित्य अकादमिक कैलेंडर से छेड़छाड़ नहीं करना बताया गया था! इससे पहले कन्नड़ के 7 लेखकों - देवानूर महादेव, जी रामाकृष्णा, रूपा हासन, इरप्पा एम कंबाली, सतीश कुलकर्णी, सुकन्या मारुती तथा दोड्डाहुल्लूरु - ने 21 सितंबर को गठित रोहिथ चक्रतीर्थ समिति के निर्देशन में पाठ-पुस्तकों के साथ साम्प्रदायिक उद्देश्य से छेड़छाड़ होने के विरोध में अपने पाठों के इस्तेमाल की अनुमति वापस ले ली थी। ये लेखक विभाग को क़ानूनी नोटिस भेजने की तैयारी कर रहे थे।
30 अक्टूबर को स्कूली शिक्षा व साक्षरता मंत्री बी सी नागेश द्वारा एक आदेश जारी किया गया जिसमें जन सूचना विभाग के माध्यम से राज्य के सभी स्कूलों व पूर्व-विश्वविद्यालययी कॉलेजों में विद्यार्थियों के लिए रोज़ाना 10 मिनट का 'ध्यान' करना अनिवार्य किया गया। मंत्री ने इस आदेश को यह कहते हुए सही ठहराया कि इससे शारीरिक तथा मानसिक तनाव कम होगा और विद्यार्थियों की एकाग्रता व सेहत बेहतर होगी। शिक्षाविद निरंजनाराध्य ने इसे एक मनमाना निर्णय क़रार देते हुए इसे शिक्षा अधिकार अधिनियम के भाग 29(1) का भी उल्लंघन बताया क्योंकि इसके तहत अकादमिक व सह-अकादमिक गतिविधियों को प्रस्तावित करने की सक्षम ज़िम्मेदारी राज्य के स्कूली शिक्षा व अनुसंधान विभाग की है। इसके पूर्व मंत्री ने स्कूलों में 'नैतिक शिक्षा' के लिए 'गीता' पढ़ाने की ये कहते हुए वकालत की थी कि यह कोई धार्मिक ग्रंथ नहीं है!

अक्टूबर के मध्य में **जमशेदपुर (झारखंड)** में साकची के एक निजी विद्यालय, सारदामोनी गर्ल्स हाई स्कूल, में नौवीं कक्षा की एक 14-वर्षीय दलित पृष्ठभूमि की छात्रा ने एक शिक्षिका द्वारा चोरी का इलज़ाम लगाने व निजता का उल्लंघन करके शारीरिक तलाशी लेने के अपमान से आहत होकर ख़ुद को आग लगा ली। छात्रा जिस समुदाय से संबंध रखती थी उसके एक संगठन दलित मुखी समाज ने शिक्षिका के इस अमानवीय व्यवहार के ख़िलाफ़ रोष प्रकट करते हुए यह इलज़ाम लगाया कि छात्रा को इससे पहले भी जाति-आधारित प्रताड़ना का निशाना बनाया गया था। शिक्षिका को हिरासत में लिया गया, लेकिन पीड़िता के परिवार को महज़ 25,000 रुपये का मुआवज़ा दिया गया।

दिसंबर की शुरुआत में **तमिलनाडु** के इरोड ज़िले के एक पंचायत यूनियन स्कूल में पाँचवीं कक्षा के दलित पृष्ठभूमि के कम-से-कम 6 विद्यार्थियों से शौचालय साफ़ करवाने की आपराधिक घटना सामने आई। यह शर्मनाक सिलसिला लगभग 6 महीनों से चल रहा था मगर इसका ख़ुलासा तब हुआ जब एक विद्यार्थी को संक्रमण हो गया। इस कक्षा में वैसे तो 40 विद्यार्थी थे, मगर यह काम केवल इन 6 से ही कराया जा रहा था। देशभर में स्कूलों के शौचालयों की सफ़ाई के कोई पुख़्ता

व नियमित इंतज़ाम न होने का ख़ामियाज़ा जाति-विशेष से आने वाले बच्चों को ही सबसे ज़्यादा भुगतना पड़ता है। अभिभावकों ने पुलिस में शिकायत दर्ज की तो केस दायर किया गया। हालाँकि मुख्याध्यापिका गीता रानी फ़रार हो गई।

दिसंबर में **केरल** के कोच्चि में दलित-आदिवासी छात्र छात्रावास की बेहतर माँग के साथ सड़कों पर उतर आए। इन माँगों के साथ 10 दिसंबर को आदिशक्ति समर स्कूल नामक संगठन के तहत कोच्चि के गाँधी चौराहे से उच्च न्यायालय जंक्शन तक विरोध जुलूस निकाला गया। विद्यार्थियों ने माँग की कि हर ज़िले में अनुसूचित जाति/जनजाति वर्ग के छात्रों के लिए मुकम्मल छात्रावास हों, भवन के रूप में तैयार लेकिन बंद पड़े छात्रावासों को खोला जाए तथा 1500 रुपये प्रतिमाह मिलने वाली राशि को असल ख़र्चे के हिसाब से बढ़ाकर 4500-7000 तक किया जाए। प्रदर्शनकारियों का कहना था कि ज़रूरत को देखते हुए या तो सहायता राशि बढ़ाई जाए या सुविधाओं में विस्तार किया जाए, क्योंकि ऊँचे किराये व रोज़मर्रा के ख़र्च के चलते कई विद्यार्थी नियमित कॉलेज की पढ़ाई से बाहर हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त उन्होंने इलेक्ट्रॉनिक प्रक्रिया से राशि मिलने में विलंब व छात्रावासों में उनकी आने-जाने की आज़ादी पर रोक-टोक लगाने के ख़िलाफ़ भी विरोध दर्ज किया। प्रदर्शनकारियों ने ज़िला अधिकारी व अन्य प्रशासनिक अधिकारियों को स्थानीय अभिभावक के रूप में मानने से इंकार करते हुए सभी छात्रावासों को राज्य के अधीन लेने की माँग भी दर्ज की।
दिसंबर में ही थिरुवनंतपुरम में आयोजित केरल के अंतर्राष्ट्रीय फ़िल्म महोत्सव (IFFK) के प्रमुख स्थल टैगोर थियेटर में कोट्टायम स्थित के आर नारायणन नैशनल इंस्टिट्यूट ऑफ़ विज़ुअल आर्ट्स ऐंड साइंस के विद्यार्थियों द्वारा निदेशक शंकर मोहन व संस्थान के अध्यक्ष अडूर गोपालकृष्णन के ख़िलाफ़ (क्रमशः जातिगत भेदभाव करने व आरोपी का पक्ष लेने के लिए) विरोध प्रदर्शन किया गया। इसके पूर्व विद्यार्थी अपने संस्थान में अनिश्चितकालीन हड़ताल पर जा चुके थे। इस विरोध में फ़िल्म जगत के कई कलाकार भी शामिल हुए। यह विरोध बाद में कन्नूर में आयोजित हैप्पीनेस इंटरनैशनल फ़िल्म फ़ेस्टिवल में अडूर गोपालकृष्णन को उद्घाटन के लिए आमंत्रित करने पर भी सामने आया। विरोध के पीछे संस्थान के सफ़ाई कर्मचारियों द्वारा निदेशक पर लगाए जातिगत भेदभाव के आरोप तथा सरथ नाम के विद्यार्थी की शिकायत थी जिसमें उन्होंने न्यूनतम अंक पाने व सीट होने के बावजूद जातिगत भेदभाव के चलते दाख़िला न मिलने का आरोप लगाया था। मार्कशीट न मिलने पर उन्होंने अगस्त में केरल उच्च न्यायालय में वाद दायर किया, तब जाकर, दो महीने बाद उन्हें मार्कशीट दी गई। आरोप था कि चयनित विद्यार्थियों की सूची विद्यार्थियों का वर्ग चिन्हित किए बिना जारी की गई थी। संस्थान की छात्र परिषद ने दिसंबर में एक बयान जारी करते हुए यह इलज़ाम लगाया कि शंकर मोहन द्वारा प्रवेश परीक्षा आयोजित करने वाले लाल बहादुर शास्त्री केंद्र के निदेशक को कहा गया था कि आरक्षण के दिशा-निर्देशों का पालन करने से योग्य विद्यार्थी नहीं मिलेंगे! 11 नवंबर को उच्च न्यायालय ने अंतरिम आदेश जारी करते हुए सरथ को अस्थाई प्रवेश देने के आदेश दिए, लेकिन तब तक वो कोलकाता के सत्यजीत राय फ़िल्म संस्थान में प्रवेश पा चुके थे। विद्यार्थियों का कहना था कि कोविड की बंदी के दौरान उन्हें विश्वास में लिए बग़ैर प्रोग्राम को पुनर्निर्मित किया गया तथा ग्रांट्स व वज़ीफ़ों के वितरण में ढिलाई बरती गई। 2022 में 4 विद्यार्थियों को निष्कासित कर दिया गया था, हालाँकि छात्रों के विरोध के चलते इस फ़ैसले को वापस लेना पड़ा था। कुछ महिला सफ़ाई कर्मियों ने निदेशक पर अपने घर की सफ़ाई करवाने तथा जातिगत भेदभाव करने का आरोप भी लगाया। बढ़ते विरोध को देखते हुए केरल सरकार को इल्ज़ामों की जाँच के लिए एक तीन-सदस्यीय समिति गठित करनी पड़ी। समिति ने अपनी रपट 20 जनवरी को पेश की और कहा कि विद्यार्थियों की शिकायतें बेबुनियाद नहीं हैं। इसके बाद निदेशक ने, यह कहते हुए कि उनका कार्यकाल समाप्त हो चुका था, इस्तीफ़ा दे दिया। अडूर गोपालकृष्णन ने भी संस्थान के अध्यक्ष पद से इस्तीफ़ा दे दिया। इस तरह विद्यार्थियों की डेढ़ महीने से ज़्यादा चली हड़ताल रंग लाई।

दिसंबर के अंत में ही आई एक रपट के अनुसार **उत्तर-प्रदेश** के राजकीय प्राथमिक स्कूलों में पढ़ने वाले अधिकतर बच्चों को स्वेटर, जूते व मोज़े नहीं मिले थे। आधी सर्दी बीत जाने पर भी राज्य के सवा लाख से अधिक प्राथमिक स्कूलों के लगभग 2 करोड़ विद्यार्थियों में से एक लाख से भी कम को इन वस्तुओं के लिए सहायता राशि मिली थी। हर विद्यार्थी को दो जोड़ी वर्दी, जूते, मोज़े, स्वेटर व स्कूल बस्ते उपलब्ध कराने के लिए महज़ 1100 रुपये आवंटित किए गए हैं, जबकि बाज़ार में इन वस्तुओं पर वास्तविक ख़र्च 1500-1800 तक आता है। प्राथमिक स्कूल के शिक्षकों के एक राष्ट्रीय स्तर के संगठन राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ ने स्थिति पर चिंता ज़ाहिर करते हुए इसके लिए 'आधार' व बैंक खातों को अनिवार्य बनाने वाली उन शर्तों को दोष दिया जो सुप्रीम कोर्ट के 2018 के आदेश का उल्लंघन भी हैं। इन शर्तों ने न सिर्फ़ अभिभावकों के सामने एक बाधा

खड़ी कर दी है, बल्कि इनकी आड़ में प्रशासन द्वारा अपनी नाकामी छुपाने के लिए शिक्षकों को अवैध धमकी दी जा रही है कि उनके छात्रों का 'आधार' में नामांकन न होने या खाते की अनुपलब्धता की स्थिति में उनके वेतन में कटौती की जाएगी! महासंघ का कहना था कि ऐसी शर्तों के कारण स्कूलों से बच्चों की बेदख़ली बढ़ रही है, जबकि विडंबना यह है कि मुख्यमंत्री ने कक्षा 8 तक 100% नामांकन दर हासिल करने के उद्देश्य से 'स्कूल चलो अभियान' को हरी झंडी दिखाई है! शिक्षा से इस तरह से वंचित व बेदख़ल किया जाना शिक्षा अधिकार अधिनियम तथा अदालती आदेशों का उल्लंघन तो है ही, यह ज़िद इसलिए भी अनर्गल है क्योंकि आमजन द्वारा तो कभी ऐसी DBT की माँग की ही नहीं गई थी!
21 दिसंबर को बरेली में विश्व हिंदू परिषद की इकाई ने फ़रीदपुर के सरकारी उच्च प्राथमिक विद्यालय के प्रिंसिपल नाहिद सिद्दीक़ी और शिक्षामित्र वज़ीरुद्दीन पर स्कूल की दैनिक सभा में इक़बाल की मशहूर व लोकप्रिय नज़्म 'लब पे आती है दुआ बन के तमन्ना मेरी' गाए जाने को लेकर धार्मिक भावनाएँ आहत करने तथा धर्म परिवर्तन करने के आरोप लगाए। इस बेहूदी शिकायत की प्रतिक्रिया में प्रशासन ने, निज़ाम के साम्प्रदायिक चरित्र व रीढ़हीन होने का सबूत देते हुए, प्रिंसिपल से स्पष्टीकरण माँगा तथा शिक्षामित्र के ख़िलाफ़ जाँच के आदेश दिए! ये शर्मनाक है कि प्रशासन को, शिक्षा की तो छोड़िए, उस मानसिक आघात तक की चिंता नहीं है जो स्कूलों के अंदर-बाहर गुंडों के ऐसे आक्रामक हमलों से बच्चों के दिलो-दिमाग़ पर पड़ता है।

सितंबर के अंत में **बिहार** में तैनात 1992 बैच की भारतीय सेवा अधिकारी हरजोत कौर बमहराह ने 'सशक्त बेटी, समृद्ध बिहार' की कार्यशाला में एक छात्रा द्वारा स्कूलों में सैनिटरी पैड उपलब्ध कराने की ज़रूरत की ओर ध्यान दिलाने पर उसे यह कहते हुए झिड़क दिया कि कल वो लोग परिवार नियोजन के लिए मुफ़्त कंडोम की माँग भी करेंगे! स्कूल में छात्राओं के शौचालयों के टूटे दरवाज़ों की तरफ़ ध्यान दिलाने पर इस आईएएस अधिकारी ने छात्राओं से उल्टे पूछा कि क्या उनके घरों में लड़के-लड़कियों के शौचालय अलग-अलग हैं! विडंबना यह है कि इस तरह का शर्मनाक व्यवहार करने वाली ये अधिकारी न सिर्फ़ महिला एवं बाल विकास विभाग की प्रमुख सचिव हैं, बल्कि बिहार महिला एवं बाल विकास निगम की अध्यक्ष भी हैं। इतना ही नहीं, यह कार्यशाला राज्य महिला एवं बाल विकास निगम तथा यूनिसेफ़ सहित अन्य अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं ने मिलकर पटना में आयोजित की थी! चारों तरफ़ से आलोचना प्राप्त करने के बाद इस अधिकारी ने प्रेस में पत्र लिखकर खेद व्यक्त किया, परंतु हैरानी है कि न तो राज्य सरकार ने और न ही अरबों डॉलर के बजट से लैस, लैंगिक समानता का पाठ पढ़ाने वाली इन सम्मानित अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं ने इस बारे में कोई कार्रवाई की। ज़ाहिर है कि न तो गलाकाटू प्रतियोगिता की तैयारी और न ही भारतीय प्रशासनिक सेवा के चरित्र से यह उम्मीद की जानी चाहिए कि ये अधिकारी 40 सालों से बिहार में महिला कर्मचारियों को मिलने वाली मासिकधर्म की छुट्टी के प्रावधान, कई राज्यों में सैनिटरी पैड वितरण की योजना या परिवार नियोजन की मुफ़्त सेवाओं के राष्ट्रीय कार्यक्रम के प्रति संवैधानिक प्रतिबद्धता महसूस करना तो दूर, इनसे परिचित भी होंगे।

अक्टूबर की शुरुआत में **मिज़ोरम** के स्कूली शिक्षा निदेशक एच लालथलांगलिआना ने बताया कि म्यांमार से भारत में शरण लेने आए परिवारों के 6200 बच्चे राज्य के सीमावर्ती ज़िलों के स्कूलों में पढ़ रहे हैं। इनमें से अधिकतर राजकीय स्कूलों में नामांकित हैं। उन्होंने क़ानून की संवैधानिक व मानवीय व्याख्या करते हुए कहा कि क़ानून म्यांमार के इन बच्चों को मिज़ोरम के स्कूलों में पढ़ने से रोकता नहीं है, हालाँकि क्योंकि इन्हें केंद्र द्वारा शरणार्थियों के रूप में मान्यता नहीं मिली है इसलिए इन्हें राजकीय कोष से वर्दी, किताबें व अन्य सहायता उपलब्ध नहीं कराई जा रही है। इनमें से ज़्यादातर बच्चे 2021 में नामांकित हो गए थे और बहुतों को स्थानीय समुदाय ज़रूरी मानवीय मदद पहुँचा रहा है। यह घटनाक्रम हमारे सामने राज्य, शिक्षा व बच्चों के अधिकारों को लेकर उदाहरण भी प्रस्तुत करता है और सवाल भी खड़े करता है।

उत्तराखंड के स्वास्थ्य मंत्री धन सिंह रावत ने, मध्य-प्रदेश से प्रेरणा लेते हुए, 5 नवंबर को अगले सत्र से मेडिकल शिक्षा की पढ़ाई हिंदी में शुरु करने की घोषणा की। उन्होंने कहा कि इससे राज्य के उन 70% विद्यार्थियों को फ़ायदा होगा जो 12वीं कक्षा तक हिंदी माध्यम से शिक्षा पा रहे हैं। इस लोकलुभावन निर्णय को इन तथ्यों के आलोक में तराज़ू में तौलना होगा - राज्य में केवल 4 सरकारी मेडिकल कॉलेज हैं जिनकी कुल 525 एमबीबीएस सीटों में से 85% राज्य के विद्यार्थियों के लिए आरक्षित हैं। पाठ-पुस्तकों को तैयार करने के लिए श्रीनगर के राजकीय मेडिकल कॉलेज के प्रिंसिपल डॉ सी एम एस रावत की अध्यक्षता में एक 4-सदस्यीय विशेषज्ञ समिति गठित की गई है। किताबें तैयार करने से पूर्व ही कोर्स की घोषणा करना एक विसंगति है, मगर मध्य-प्रदेश के उदाहरण से सीख न लेना, जहाँ आनन-फ़ानन में हिंदी में दोयम दर्जे की किताबें ही

तैयार की जा सकीं और जहाँ हिंदी माध्यम के उच्च-शिक्षा संस्थान विद्यार्थियों की राह देखते-देखते बंदी की कगार पर आ गए, इससे भी बड़ी विसंगति है।

निजी संस्थाओं के साथ क़रार करके **दिल्ली** सरकार के शिक्षा मॉडल को रूप दिया गया है। इन्हीं में से एक पीपीपी योजना अनुसूचित जाति/जनजाति/पिछड़े वर्ग से आने वाले आर्थिक रूप से कमज़ोर पृष्ठभूमि (सालाना पारिवारिक आय 8 लाख से कम) के विद्यार्थियों को प्रतियोगी परीक्षाओं की मुफ़्त तैयारी कराने के उद्देश्य से लाई गई थी। जय भीम मुख्यमंत्री प्रतिभा विकास योजना को 2018 में शुरु किया गया था। अक्टूबर 2021 में इसके तहत 13,000 विद्यार्थी विभिन्न निजी संस्थानों में नामांकित थे। लेकिन 46 संस्थानों ने जुलाई से ही यह कहते हुए इन वंचित वर्गों के विद्यार्थियों की कोचिंग बंद कर दी कि उन्हें सरकार द्वारा भुगतान नहीं किया गया था। यहाँ तक कि 7 नवंबर को इन संस्थानों द्वारा अपनी बक़ाया राशि के भुगतान के लिए अनुसूचित जाति/जनजाति/पिछड़ा वर्ग कल्याण विभाग के समक्ष विरोध प्रदर्शन किया गया। एक तरफ़ दिल्ली सरकार के स्कूलों में विज्ञान वर्ग तेज़ी से लुप्त होता जा रहा है, दूसरी तरफ़ वो स्कूल्ज़ ऑफ़ स्पेशलाइज़्ड एक्सीलेंस के नाम से मुट्ठीभर विशिष्ट स्कूल चलाकर कोचिंग संस्थाओं से प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी कराने को ही बेहतर विज्ञान शिक्षा देने का झूठा प्रचार कर रही है। रही-सही कसर निजी संस्थाओं के हाथों चढ़ी ऐसी योजनाओं की तयशुदा नाकामी निकाल रही है।

विश्वविद्यालय

12 सितंबर को **जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय** की शिक्षक यूनियन जेएनयूटीए ने प्रशासन के समक्ष सभी कोर्सों के लिए एनटीए द्वारा आयोजित सीयूईटी प्रवेश परीक्षा पर रोक लगाने की माँग की। प्रवेश व सत्र में हो रही अत्याधिक देरी के लिए इस परीक्षा के ग़ैर-ज़िम्मेदाराना आयोजन को दोष देते हुए उन्होंने इसे शिक्षण के बेशक़ीमती वक़्त की बर्बादी बताया। उनका कहना था कि न सिर्फ़ पूरे देश पर एक केंद्रीकृत परीक्षा थोपना लोगों की विविध परिस्थितियों के साथ क्रूर मज़ाक है, बल्कि यह विचार विश्वविद्यालयों की स्वायत्तता तथा उन अधिनियमों के भी ख़िलाफ़ है जिनके तहत जेएनयू जैसे संस्थान खड़े किए गए थे।
दिसंबर के पहले हफ़्ते में जेएनयू के भाषा, साहित्य व सांस्कृतिक अध्ययन तथा अंतर्राष्ट्रीय संबंध विभागों की दीवारों पर ब्राह्मण व बनिया वर्ग विरोधी नारे - जैसे, 'हम तुम्हारे लिए आ रहे हैं' (वी आर कमिंग फ़ॉर यू) और 'ख़ून बहेगा' (देयर विल बी ब्लड) - दिखाई दिए। जहाँ प्रशासन ने इस बारे में जाँच समिति बिठाई वहीं उसने इसे कैंपस में सीसीटीवी कैमरे लगाकर निगरानी बढ़ाने के बहाने के लिए भी इस्तेमाल किया।

15 दिसंबर 2019 को **अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय** में NRC-CAA के ख़िलाफ़ विद्यार्थियों के जिस विरोध-प्रदर्शन को पुलिस ने उकसाया था और प्रदर्शनकारियों पर लाठी-चार्ज किया था, उसके संबंध में उच्च न्यायालय ने जनवरी 2020 को जाँच के आदेश दिए थे और आख़िरकार तीन साल बाद राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग ने इस मामले में अपनी रपट पेश की। रपट में पुलिसिया बर्बरता पर पर्दा डालते हुए विद्यार्थियों व पुलिस दोनों की एक-समान आलोचना की गई। इसके बाद, सितंबर 2022 में जाकर, अदालत ने विद्यार्थियों की सभी अर्ज़ियों को यह कहते हुए ख़ारिज कर दिया कि एक तरफ़ विद्यार्थी संस्थानों में पढ़ने आते हैं (आंदोलन करने नहीं!), दूसरी तरफ़ प्रशासन को उनके साथ बेहतर संवाद रखना चाहिए।

सितंबर के मध्य में **चंडीगढ़ विश्वविद्यालय** (जोकि एक निजी संस्थान है) की कई छात्राओं के आपत्तिजनक वीडियो के सामने आने पर मोहाली परिसर में विद्यार्थियों ने विरोध-प्रदर्शन किया। उनका कहना था कि इन वीडियो को गुपचुप ढंग से बनाया गया है और इनके सार्वजनिक होने पर कई छात्राएँ आत्महत्या की कगार तक जा चुकी हैं। पुलिस ने इन वीडियो को अफ़वाह बताते हुए आत्महत्या की बात को भी दबाने की कोशिश की, जबकि मुख्यमंत्री ने जाँच के आदेश दिए। एक छात्रा को हिरासत में लिया गया तथा प्राथमिकी दर्ज की गई। बाद में तीन आरोपित गिरफ़्तार किए गए व प्रशासन द्वारा एक तीन-सदस्यीय महिला जाँच समिति गठित की गई।

3 नवंबर को दिल्ली स्थित **दक्षिण एशियाई विश्वविद्यालय (SAU)** के प्रॉक्टर ने, विरोध कर रहे विद्यार्थियों के ख़िलाफ़ कार्रवाई करने के आदेश के जवाब में विद्यार्थियों के साथ एकजुटता दिखाते हुए इस्तीफ़ा दे दिया। ये विद्यार्थी एक महीने से

आर्थिक रूप से कमज़ोर वर्गों से आने वाले छात्रों के लिए अधिक वज़ीफ़ों, सभी पीएचडी शोधार्थियों के लिए जेआरएफ के समान सहायता राशि, शिकायत निवारण समितियों में छात्रों की भागीदारी तथा इन समितियों व प्रशासनिक पदों पर समाज विज्ञान के अधिक शिक्षकों को शामिल करने की माँग कर रहे थे। विश्वविद्यालय के नए प्रॉक्टर ने, बिना किसी प्रक्रिया का पालन किए, 2 विद्यार्थियों को बेदख़ल, 2 को निष्कासित व 1 को निलंबित कर दिया। 5 नवंबर को 8 विद्यार्थियों द्वारा भूख हड़ताल की गई, लेकिन प्रशासन निर्लज्ज बना रहा। विद्यार्थियों का कहना है कि संस्थान को मिलने वाले अनुदानों में लगातार कटौती करके उसे हीफ़ा (HEFA) ऋण की ओर धकेला जा रहा है और इस तथाकथित स्वायत्तता का अंजाम बढ़ती फ़ीस व घटते वज़ीफ़ों में सामने आ रहा है।

दिसंबर में लखनऊ स्थित **बाबासाहेब भीमराव अंबेडकर विश्वविद्यालय** में दलित पृष्ठभूमि के कई विद्यार्थियों को, वर्तमान व पूर्व के सेमेस्टरों की फ़ीस न भर पाने के कारण, परीक्षा में बैठने की इजाज़त नहीं दिए जाने की ख़बर आई। इंस्टिट्यूट ऑफ़ इंजीनियरिंग ऐंड टेक्नॉलोजी के इन विरोध कर रहे विद्यार्थियों का कहना था कि वो फ़ीस भरने में इसलिए असमर्थ हैं क्योंकि उनके वज़ीफ़ों का समय से भुगतान नहीं किया गया है तथा वो वज़ीफ़ों पर ही निर्भर हैं। प्रशासन ने उन्हें 25 दिसंबर तक फ़ीस भरने, उसके बाद फ़ॉर्म भरने तथा फिर जनवरी में अलग से परीक्षा में बैठने का नोटिस जारी किया था, जबकि सेमेस्टर परीक्षाएँ 12 दिसंबर से ही शुरु हो चुकी थीं। विद्यार्थियों ने आरोप लगाया कि समाज कल्याण विभाग द्वारा वज़ीफ़ों में इतनी देरी की जाती है कि कई छात्र पढ़ाई छोड़ने पर मजबूर हो जाते हैं। समाज कल्याण मंत्री असीम अरुण ने अक्टूबर में आश्वासन दिया था कि वज़ीफ़ों का भुगतान समय से किया जाएगा। कंप्यूटर साइंस व इंजीनियरिंग जैसे कोर्सों की ऊँची फ़ीस के चलते इनके विद्यार्थी विशेषकर वज़ीफ़ों के माध्यम से ही अपनी फ़ीस भरते हैं। वज़ीफ़ों में देरी का ख़ामियाज़ा उन्हें दंड के साथ फ़ीस भर के भुगतना पड़ता है। विद्यार्थियों के अनुसार फ़ीस न भर पाने के चलते 20 से अधिक छात्र घर लौट गए और अगर ये 25 दिसंबर तक भी नहीं आती है तो और छात्र घर लौट जाएँगे। अन्य विभागों के 100 से अधिक विद्यार्थी भी इसी समस्या का सामना कर रहे हैं। यह विडंबना है कि इस विश्वविद्यालय को अनुसूचित जाति/जनजाति के हितों को विशेष रूप से संरक्षित करने के उद्देश्य से खोला गया था। यह उत्पीड़न सरकार के EWS (आर्थिक रूप से कमज़ोर वर्ग) के प्रति संवेदना के झूठ तथा ऋण के तर्क के फ़रेब को भी उजागर करता है।
इसी क्रम में, **इलाहबाद विश्वविद्यालय** में फ़ीस 400% तक बढ़ाकर 4000 रुपये से ऊपर पहुँचा दी गई। प्रशासन ने विद्यार्थियों के लंबे व जुझारू विरोध का इतना ही संज्ञान लिया कि परिसर को छावनी में बदल दिया गया है। उधर दिल्ली व बॉम्बे की **आईआईटी** में बढ़ाई गई फ़ीस को विद्यार्थियों के लंबे विरोध के बाद आंशिक रूप से वापस लिया गया। इसी तरह अक्टूबर में पुणे स्थित **सावित्रीबाई फुले विश्वविद्यालय** के स्नातकोत्तर व शोधरत विद्यार्थियों ने राशिनी प्रेरित फ़ीस बढ़ोतरी के ख़िलाफ़ बैठकें व धरना-प्रदर्शन आयोजित करके अभियान चलाया। इस संघर्ष में लोकायत ने भी विद्यार्थियों को समर्थन दिया। अंततः प्रशासन को बढ़ी हुई फ़ीस का बड़ा हिस्सा वापस लेना पड़ा। महँगी होती शिक्षा का ये सारा उपक्रम बेशक राष्ट्रीय शिक्षा नीति की देन भी है।

24 दिसंबर को **जादवपुर विश्वविद्यालय** के 65वें दीक्षांत समारोह में पश्चिम बंगाल के राज्यपाल सी वी आनंद बासु को विद्यार्थियों के विरोध का सामना करना पड़ा। विद्यार्थी छात्र संघ परिषद के लिए चुनाव कराने की माँग कर रहे थे। इसके पूर्व उन्होंने कुलपति सुरंजन दास के समक्ष विरोध दर्ज करते हुए उनकी गाड़ी रोक दी थी। प्रशासन ने पिछले तीन वर्षों से छात्रसंघ के चुनाव आयोजित नहीं कराए हैं। **कलकत्ता मेडिकल कॉलेज** के विद्यार्थी भी लंबे समय से इसी बाबत संघर्षरत हैं; यहाँ तक कि उन्होंने भूख हड़ताल भी की और प्रशासन के शर्मनाक रूप से मूक बने रहने पर अपने तईं चुनाव आयोजित भी कर दिए, प्रशासन ने जिन्हें अवैध ठहराकर अपनी लोकतांत्रिक अवैधता का ही सबूत दिया।

22 दिसंबर को **विश्व भारती विश्वविद्यालय** के शिक्षक संघ के अध्यक्ष प्रोफ़ेसर सुदीप्ता भट्टाचार्य की सेवा, बिना जाँच प्रक्रिया अपनाए, समाप्त कर दी गई। इसके पूर्व वो, नियुक्तियों में हुई अनियमितताओं के बारे में सूचना का अधिकार अधिनियम के तहत जवाब माँगने की सज़ा के तौर पर, 21 महीने के निलंबन के बाद बहाल हुए थे। इसी के साथ, 6 विद्यार्थियों को एक वर्ष के लिए निलंबित कर दिया गया। इसमें 4 अनुसूचित वर्ग से व 2 पिछड़े वर्ग से थे। विद्यार्थियों ने प्रशासन पर वंचित समूहों से आने वालों और आंदोलन को नेतृत्व देने वालों को निशाना बनाने का आरोप लगाया। प्रशासन की अनुचित कार्रवाई का सबूत इस बात से ही चलता है कि उसने एक पूर्व-छात्र को भी निलंबित करने के आदेश जारी कर दिए! प्रशासन के इन तानाशाही आदेशों को अदालत में चुनौती दी गई। नवंबर के अंतिम हफ़्ते से ही अपनी माँगों को लेकर

छात्र कुलपति निवास के बाहर धरने पर बैठे थे। निलंबन पत्र में कुलपति के घेराव का उल्लेख करते हुए ज़ोर-ज़बरदस्ती से उन्हें 20 दिनों तक अपने सरकारी निवास से निकलने से रोकने का आरोप भी लगाया गया था। 2018 में कार्यभार संभालने के बाद से ही कुलपति बिद्युत चक्रबर्ती विद्यार्थियों की लोकतांत्रिक माँगों से टकराते आ रहे हैं। 2020 से लेकर अब तक 20 शिक्षकों के ख़िलाफ़ अनुशासनात्मक कार्रवाई की गई है या उन्हें निलंबित किया गया है। उदाहरण के तौर पर, 2019 में 150 कर्मचारी 21 दिन के विरोध में शामिल हुए थे जिसके बाद विश्वविद्यालय प्रशासन ने उन्हें माफ़ीनामा लिखने को कहा और ऐसा नहीं करने पर 3 लोगों को निलंबित कर दिया। इन हालातों के नतीजतन, विश्वविद्यालय तथा विद्यार्थियों व कर्मचारियों के बीच 100 से ज़्यादा मामले अदालत में चल रहे हैं। इस दौरान फ़ीस बढ़ोतरी, परिसर में शिक्षकों-विद्यार्थियों के आने-जाने पर रोक लगाने, छात्रावास में प्रवेश सीमित करने तथा हिंदू धार्मिक रिवाजों को थोपने के बारे में लगातार शिकायतें आती रही हैं। इस बार के विरोध प्रदर्शन में विद्यार्थियों की ओर से मुख्यतः दो माँगें रखी गई थीं। इनमें एक सोमनाथ सौ नाम के दलित पृष्ठभूमि के छात्र को, जिन्होंने 2021 में वीबीयू से अर्थशास्त्र में स्नातक की डिग्री हासिल की थी, स्नातकोत्तर कोर्स में प्रवेश देने की थी। जबकि उन्हें न सिर्फ़ आंतरिक उम्मीदवार के तौर पर प्रवेश मिलना ही चाहिए था, बल्कि प्रथम सूची में उनका नाम भी था जिसे बाद में, विद्यार्थियों के आरोपानुसार, कुलपति के ख़िलाफ़ सोशल मीडिया पर दो आलोचनात्मक टिप्पणियाँ करने के बदले के रूप में, हटा दिया गया। सोमनाथ के विरुद्ध एक शिक्षक ने जातिगत टिप्पणियाँ की थीं और उस शिक्षक को इसके लिए हवालात में भी रहना पड़ा मगर विश्वविद्यालय ने उसके ख़िलाफ़ कोई कार्रवाई नहीं की। सोमनाथ को अदालत से इस शर्त पर राहत मिली कि वो माफ़ी माँगें। उन्होंने इसका पालन भी किया लेकिन फिर भी उन्हें प्रवेश नहीं दिया गया। दूसरी तरफ़ वीबीयू की पीएचडी शोधार्थी मीनाक्षी भट्टाचार्य - जोकि विश्वविद्यालय में तृणमूल छात्र परिषद की इकाई की अध्यक्षा भी हैं - की वार्षिक रपटों को रोक लिया गया और उन्हें सामान्यतः महिला को मिलने वाला दो वर्ष का अतिरिक्त समय भी नहीं दिया गया। इसी तरह, पुरुष छात्रावास में कुलपति द्वारा एक संबोधन में संविधान पर आक्षेप करने वाली टिप्पणी को सार्वजनिक करने की सज़ा के तौर पर बिज्जु सरकार नाम के छात्र को मनमाने ढंग से हॉस्टल से निकाल दिया गया। विद्यार्थी समय से परीक्षा परिणाम घोषित करने, नौकरियों के लिए सहयोग व छात्रावास में प्रवेश की माँग भी कर रहे थे। राज्य व देशभर के छात्र व शिक्षक संगठनों ने विश्व भारती के संघर्षरत विद्यार्थियों व शिक्षकों के साथ एकजुटता प्रकट की है। वहीं, जनवरी के आरंभ में प्रशासन ने एक प्रेस विज्ञप्ति जारी करते हुए छात्र आंदोलन पर हिंसक संस्कृति अपनाने के आरोप लगाए। साथ ही, 5 जनवरी को अपनी वेबसाइट पर इस संदर्भ में सख़्ती से पेश आने की धमकी दी। शिक्षक संघ व छात्रों द्वारा इस असभ्य भाषा का कड़ा विरोध किया गया। विद्यार्थी इस प्रताड़ना के विरुद्ध कमर कसे हुए हैं और अपना संघर्ष जारी रख रहे हैं।

कुछ प्रसंग

25 नवंबर को राज भवन में 20 ग़ैर-कृषि विश्वविद्यालयों के कुलपतियों की बैठक में महाराष्ट्र के उच्च व तकनीकी शिक्षा मंत्री चंद्रकांत पाटिल ने महाराष्ट्र के डिग्री कॉलेजों में 18 वर्ष से अधिक उम्र के विद्यार्थियों के **प्रवेश के लिए मतदाता सूची में पंजीकरण को अनिवार्य** करने की घोषणा की। इस फ़रमान के पक्ष में उन्होंने विद्यार्थियों के पंजीकरण के कमतर दर की दलील दी। उन्होंने विश्वविद्यालयों से विद्यार्थियों के पंजीकरण को बढ़ाने के लिए अभियान चलाने के लिए कहा। लोकतंत्र को मज़बूत करने के इस तानाशाही व विरोधाभासी आदेश के चरित्र का ख़ुलासा करते हुए, इसके बाद उन्होंने मौजूद कुलपतियों को धमकी दी की कि अगर वो अगले सत्र से राशिनी के तहत 4-वर्षीय स्नातक कोर्स शुरु नहीं करते हैं तो उनके ख़िलाफ़ कार्रवाई की जाएगी!

इसी कड़ी में, एक क़दम आगे जाते हुए, 26 नवंबर को देश की संघीय सरकार ने यह सार्वजनिक किया कि वो एक क़ानून लाकर प्रवेश, मतदाता पंजीकरण, राज्य/केंद्र सरकार की नौकरियों, ड्राइविंग लाइसेंस, पासपोर्ट आदि जीवन के तमाम आयामों के लिए **जन्म प्रमाण-पत्र अनिवार्य** करने जा रही है। इसके औचित्य के रूप में 18 वर्ष से अधिक उम्र के लोगों के स्वतः मतदाता पंजीकरण व मतदाता की मृत्यु उपरांत स्वतः नाम हटाने की प्रक्रिया को लागू करना बताया गया। जबकि संवैधानिक दृष्टि से मतदाता पंजीकरण कोई अनिवार्य कर्म नहीं है और सायास आवेदन की माँग करता है, विडंबना यह है कि उपरोक्त प्रस्ताव संविधान दिवस के राजकीय मौक़े पर उजागर किए गए। इन प्रस्तावों में शासन द्वारा तंत्र के संचालन व समाज की चेतना में भी लोगों के अधिकारों के बदले अपनी निरंकुश सत्ता तथा लोगों के दायित्वों को स्थापित करने की मंशा साफ़ नज़र आती है।

26 अक्टूबर को **केरल के राज्यपाल** ने मुख्यमंत्री को पत्र लिखकर बताया कि उन्होंने केरल विश्वविद्यालय के एक कार्यक्रम में वित्त मंत्री के एन बालगोपाल के अभिभाषण को लेकर उनके प्रति अपनी 'कृपादृष्टि' वापस ले ली है ('विदड्रॉन हिज़ प्लैज़र')। मंत्री ने अपने अभिभाषण में कहा था : "केरल को शिक्षा के लोकतांत्रीकरण से बहुत फ़ायदा हुआ है। विद्यार्थी के रूप में मेरा अनुभव मुख्यतः केरल विश्वविद्यालय का है। राज्य सभा का सदस्य रहते हुए मुझे जेएनयू व एएमयू के सीनेट का हिस्सा बनने का अवसर मिला। एक छात्र कार्यकर्ता के रूप में मैंने लगभग सभी मुख्य विश्वविद्यालयों का दौरा किया। एक घटना मुझे ख़ासतौर से याद है। मिदनापुर में हुए राष्ट्रीय सम्मेलन में मुझे राष्ट्रीय अध्यक्ष चुना गया था। सम्मेलन के बाद मुझे बीएचयू जाना पड़ा क्योंकि गोली चलने की घटना में वहाँ 5 छात्र मारे गए थे। स्थिति तनावपूर्ण थी। आप जानते हैं कि विद्यार्थियों पर गोली किसने चलाई थी? कुलपति के सुरक्षा कर्मियों ने। उत्तर-प्रदेश स्थित बीएचयू के कुलपति के पास 50 से 60 सुरक्षा कर्मी थे। उधर के बहुत-से विश्वविद्यालयों में ऐसी ही हालत थी। इसलिए ऐसी जगहों से आने वालों के लिए केरल के विश्वविद्यालयों को समझना मुश्किल होगा। केरल के विश्वविद्यालय लोकतांत्रिक रूप से काम करने वाले संस्थान हैं जोकि अकादमिक विषयों पर चर्चा में सभी क्षेत्रों के लोगों को शामिल करते हैं। इन विश्वविद्यालयों ने केरल के समाज में बड़े बदलाव लाने में योगदान दिया है। इन लोक संस्थानों के लोकतंत्र को अपनाने तथा केरल, जोकि देश के अन्य इलाक़ों से कहीं अधिक विकसित है, की शिक्षा में लोगों की भूमिका व अकादमिक ढाँचे को मज़बूत करने के प्रयास करने होंगे। इसके लिए हमें अपने सीनेट व अकादमिक परिषदों को मज़बूत करना होगा। देश के लोग भी इस ओर बहुत गंभीरता से देख रहे हैं।"

अक्टूबर के अंत में यह ख़बर आई कि राज्यपाल ने ऐसे वरिष्ठ प्रोफ़ेसरान की एक सूची तैयार की है जिन्हें राज्य के विश्वविद्यालयों के वर्तमान कुलपतियों को हटाने के बाद कार्यभार सौंपा जाएगा। राज्य के विश्वविद्यालयों के कुलाधिपति के रूप में उन्होंने यूजीसी की शर्तों के मुताबिक़ हर विश्वविद्यालय से 10 वर्षों से अधिक की सेवावधि वाले 10 प्रोफ़ेसरान के नाम इकट्ठे कर लिए हैं। 9 कुलपतियों को, उनकी नियुक्ति को यूजीसी की शर्तों के विरुद्ध बताते हुए, 3 नवंबर की शाम 5 बजे तक कारण बताओ आदेश के जवाब दाख़िल करने के लिए कहा गया। ये आदेश सुप्रीम कोर्ट द्वारा एम एस राजश्री की ए पी जे अब्दुल कलाम टेक्नोलॉजिकल यूनिवर्सिटी के कुलपति के रूप में नियुक्ति को रद्द करने के बाद जारी किए गए थे। राज्य सरकार ने अतिरिक्त कार्यभार संभालने के लिए साजि गोपीनाथ के नाम की अनुशंसा की थी मगर राज्यपाल ने इसे नहीं माना। 4 नवंबर को केरल विश्वविद्यालय के सीनेट ने अपने इस आग्रह से पलटने से मना कर दिया कि राज्यपाल कुलपति का चयन करने के लिए अपनी उस 2-सदस्यीय समिति निर्मित करने की विज्ञप्ति को वापस लें जिसको उन्होंने सीनेट के उम्मीदवार के बिना गठित किया था। इस प्रस्ताव के पक्ष में 50 मत पड़े, विरोध में 7 तथा 3 ने मत नहीं डाला। इसके अतिरिक्त, राज्यपाल ने 15 सदस्यों को निष्कासित कर दिया था। राज्यपाल के इस आदेश को केरल यूनिवर्सिटी अधिनियम व यूजीसी नियमों के विरुद्ध बताया गया। सीनेट के 63 सदस्यों ने विशेष बैठक आहूत की थी। अगस्त में भी सीनेट ने राज्यपाल से अपनी विज्ञप्ति वापस लेने का अनुरोध किया था, मगर उन्होंने इसे नज़रंदाज़ किया। 13 दिसंबर को केरल की विधान सभा ने दो विश्वविद्यालय क़ानून (संशोधन) अधिनियम पारित किए जिनका उद्देश्य राज्यपाल को राज्य के 14 विश्वविद्यालयों के कुलाधिपति के पद से हटाना था। इन विधेयकों में, नैशनल यूनिवर्सिटी ऑफ़ एडवांस्ड लीगल स्टडीज़ तथा केरल कलामंडलम को छोड़कर, राज्य के सभी विश्वविद्यालयों के कुलाधिपति के रूप में विभिन्न क्षेत्रों के विशिष्ट व्यक्तियों को नियुक्त किए जाने का प्रावधान है। हालाँकि, विपक्ष इन विधेयकों का विरोध करते हुए सदन से बाहर चला गया। इस बीच केरल उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने एकल न्यायाधीश के उस आदेश पर रोक लगा दी जिसके तहत राज्यपाल द्वारा ए पी जे अब्दुल कलाम टेक्नोलॉजिकल यूनिवर्सिटी की कार्यकारी कुलपति के रूप में सिज़ा थॉमस की नियुक्ति को उचित ठहराया गया था।

5 नवंबर को **सरकारी मेडिकल कॉलेजों में चिकित्सा की पढ़ाई के लिए हरियाणा सरकार की बॉन्ड नीति** का विरोध करने पर रोहतक पुलिस ने 300 विद्यार्थियों को गिरफ़्तार कर लिया तथा प्राथमिकी दर्ज की। ऐसा तब हुआ जब कई दिनों से शांतिपूर्ण प्रदर्शन कर रहे विद्यार्थियों ने अपने विरोध स्थल को रोहतक स्थित पंडित भगवत दयाल शर्मा स्वास्थ्य विज्ञान विश्वविद्यालय के दीक्षांत समारोह में राज्यपाल, मुख्यमंत्री व स्वास्थ्य मंत्री के आगमन के मद्देनज़र, इस स्थल के नज़दीक लाने का फ़ैसला किया। 15 नवंबर को राजकीय मेडिकल कॉलेजों के आंदोलनरत विद्यार्थियों ने सरकार को अपनी माँगों का जवाब देने के लिए 3 दिन की मोहलत प्रदान करते हुए आंदोलन को तेज़ करने की चेतावनी दी। रोहतक, नूह, करनाल व

सोनीपत स्थित 4 राजकीय मेडिकल कॉलेजों के विद्यार्थी पिछले दो हफ़्तों से अपने परिसरों में बॉन्ड नीति का विरोध दर्ज कर रहे थे। इसके बाद उन्होंने रोहतक में एक संयुक्त प्रेस सम्मेलन किया जिसमें उन्होंने प्रशासन से सफ़ाई माँगी तथा जुलूस निकाला। यह नीति 6 नवंबर 2020 को कहने को डॉक्टरों को राजकीय सेवा के प्रति प्रेरित करने के उद्देश्य से लाई गई थी। इसके तहत राजकीय मेडिकल कॉलेज में दाख़िला ले रहे प्रत्येक विद्यार्थी को हर सत्र की शुरुआत में 10 लाख रुपये का बॉन्ड (फ़ीस की राशि घटाकर) दाख़िल करना होगा। विरोध कर रहे विद्यार्थियों की मुख्य माँगें थीं - बैंकों को क़रार में शामिल नहीं किया जाए, अनिवार्य राजकीय सेवा की अवधि को एक वर्ष तक सीमित किया जाए तथा बॉन्ड हर्जाने की राशि को 5 लाख से कम रखा जाए। 30 नवंबर को आंदोलनरत विद्यार्थियों व मुख्यमंत्री के बीच हुई बैठक नाकाम रही। मुख्यमंत्री ने कहा कि सरकार नीति में कुछ बदलाव करने को तैयार है, जिसमें बॉन्ड अवधि को 7 वर्ष से घटाकर 5 वर्ष करना, स्नातकोत्तर की शिक्षा जारी रखने वालों को 3 साल की छूट देना व बॉन्ड राशि में 10 लाख रुपये कम करना शामिल है। इसके साथ ही उन्होंने चिकित्सा के स्नातकों को पास होने के एक साल के अंदर 'गारंटीकृत संविदात्मक सेवा' का भरोसा भी दिलाया! आंदोलन के नेतृत्व ने इस प्रस्ताव को अस्वीकार किया। डॉक्टरों की देशव्यापी संस्था आईएमए ने भी आंदोलनरत विद्यार्थियों का समर्थन किया। मुख्यमंत्री के प्रस्तावों के विपरीत विद्यार्थियों ने अपनी माँगें एक बार फिर दोहराईं - 7 साल के बॉन्ड के बदले मेडिकल पढ़ाई के स्नातकों की, उनके कोर्स पूरा होने के दो महीनों के अंदर, राजकीय अस्पतालों में अनिवार्य नियुक्ति; स्नातकोत्तर शिक्षा के लिए अनिवार्य पोस्टिंग की शर्त को स्थगित करना; बॉन्ड का अधिकतम हर्जाना 10 लाख रुपये करना; केवल अनिवार्य पोस्टिंग ठुकराने पर ही बैंक ऋण जारी करना आदि। 54 दिनों के विरोध और मुख्यमंत्री के साथ वार्ता के एक और सत्र के उपरांत सरकार द्वारा संशोधित बॉन्ड नीति लाने के तीन दिनों के बाद, अंततः 24 दिसंबर को मेडिकल के विद्यार्थियों ने अपना आंदोलन वापस ले लिया। ये विद्यार्थी परीक्षा के लिए उपस्थिति दर में छूट, परीक्षाओं को टालने व आंदोलनकारियों के विरुद्ध दर्ज केसों को वापस लेने की माँगें मनवाने में कामयाब रहे।

हिजाब पर रोक के बहाने शिक्षा से बहिष्करण

12 सितंबर को सुप्रीम कोर्ट में हिजाब के विषय पर बहस के दौरान छात्राओं की तरफ़ से यह दलील दी गई कि किसी भी प्रतिबंध को जायज़ ठहराने का भार राज्य पर है और यह प्रतिबंध न सिर्फ़ व्यक्तित्व की गरिमा को नष्ट करता है, बल्कि निजता का उल्लंघन भी है। इसके विपरीत, संविधान धार्मिक-सांस्कृतिक पहचान संरक्षित करने की आज़ादी देता है जिसके तहत हमें विविधता को दर्ज, स्वीकार व सम्मानित करने की ज़रूरत है। अगले दिनों चली जिरह के दौरान इस प्रतिबंध को लिंग व धर्म के आधार पर भेदभावपूर्ण बताते हुए यह आग्रह किया गया कि अगर सार्वजनिक स्थलों पर हिजाब पहनने पर कोई रोक नहीं है, तो शैक्षिक स्थलों पर इस रोक का कोई औचित्य नहीं बनता है। फिर यह प्रतिबंध शिक्षा में समावेश के मूल्य के तथा बहनापे/भ्रातृत्व भाव के लिए ज़रूरी विविधता में एकता के मूल्यों के भी विरुद्ध जाता है, क्योंकि एकरूपता व मानकीकरण से सच्चा भ्रातृत्व नहीं पनप सकता है। वकीलों का यह भी कहना था कि इस प्रतिंबंध से राज्य के किसी भी वैध हित को साधा नहीं जा रहा है। चूँकि हिजाब, सिख पगड़ी व कृपाण की तरह, अभिव्यक्ति का माध्यम है और पहनावा निजी अभिव्यक्ति का विषय है, इसलिए छात्राओं को इसे परिसर के द्वार पर उतार कर आने के लिए नहीं कहा जा सकता है। आख़िर राज्य शिक्षा और निजता के बीच सौदा करने का दबाव नहीं बना सकता है। संविधान का अनुच्छेद 25 भी इस हक़ की गारंटी देता है। छात्राओं ने इस मामले की सुनवाई को संविधान पीठ के सुपुर्द करने की माँग की। उन्होंने उच्च न्यायालय द्वारा स्कूलों को 'विशिष्ट स्थल' के रूप में चिन्हित करने के आधार पर प्रतिबंध को सही ठहराने को यह कहते हुए ग़लत बताया कि यह व्याख्या मौलिक अधिकारों को अन्यायपूर्ण ढंग से सीमित करती है और हिजाब को शांति के लिए ख़तरे के रूप में देखती है। इस बीच एमनेस्टी इंटरनैशनल इंडिया ने प्रतिबंध की यह कहते हुए आलोचना की कि महिलाओं को अभिव्यक्ति की आज़ादी, धर्म व शिक्षा में से एक को चुनने पर मजबूर करना भेदभावपूर्ण है। कर्नाटक सरकार ने कोर्ट में कहा कि छात्राओं को पीएफ़आई द्वारा हिजाब पहनने को उकसाया गया है क्योंकि 2022 से पूर्व यह चलन में नहीं था। कर्नाटक सरकार के यह कहने पर कि प्रतिबंध धर्मनिरपेक्ष है तथा भेदभावपूर्ण नहीं है, न्यायाधीश सुधांशु धूलिया ने सवाल किया कि कक्षाओं में विविधता की अनुमति दिए बग़ैर हम बच्चों को विविधता के लिए कैसे तैयार कर सकते हैं। 22 सितंबर को, 10 दिनों तक चली बहस के बाद, न्यायालय ने अपना फ़ैसला सुरक्षित कर लिया। अंततः 13 अक्टूबर को सर्वोच्च न्यायालय ने हिजाब के मुद्दे पर एक विभाजित फ़ैसला दिया। न्यायाधीश हेमंत गुप्ता ने कर्नाटक सरकार द्वारा शैक्षिक परिसरों में हिजाब को प्रतिबंधित करने वाले 5 फ़रवरी 2022 के आदेश को यह कहते हुए वैध ठहराया कि राज्य के कोष से

संचालित धर्मनिरपेक्ष स्कूलों में प्रत्यक्ष रूप से धार्मिक प्रतीक धारण नहीं किए जा सकते हैं। इस शासनादेश में कर्नाटक शिक्षा अधिनियम 1983 का हवाला दिया गया था जोकि कक्षाओं में धार्मिक आचरण (प्रैक्टिस) को प्रतिबंधित करता है। धर्मनिरपेक्षता को एकरूपता जताते हुए उन्होंने इस प्रतिबंध को अभिव्यक्ति की आज़ादी पर औचित्यपूर्ण पाबंदी तथा बराबरी के लिए ज़रूरी अनुशासन की शर्त के रूप में सही ठहराया। उनका कहना था कि राज्य ने विद्यार्थियों को स्कूलों से बाहर नहीं किया था, बल्कि उन्होंने ख़ुद बाहर रहने का फ़ैसला किया था! इसके विपरीत, न्यायाधीश सुधांशु धूलिया ने प्रतिबंध से अपनी असहमति जताते हुए धर्मनिरपेक्षता को विविधता के प्रति सहनशीलता बताया। उन्होंने कहा कि हिजाब व्यक्ति के चयन का मसला है और इस पर रोक लगाना निजता व गरिमा पर हमला है। उन्होंने आगे कहा कि जबकि पारंपरिक/रूढ़िवादी परिवारों की बच्चियों के लिए हिजाब शिक्षा का टिकट भी हो सकता है, इस पर रोक लगाने का मतलब उनकी सेक्यूलर शिक्षा का हक़ छीनना होगा। उन्होंने इसे प्रतिबंध के किसी भी औचित्य - सार्वजनिक व्यवस्था, नैतिकता, स्वास्थ्य व शिष्टता - से परे बताया। कर्नाटक के स्कूली शिक्षा व साक्षरता मंत्री बी सी नागेश ने इसी दिन यह घोषणा की कि हिजाब पर प्रतिबंध जारी रहेगा। वहीं याचिकाकर्ताओं ने यह उम्मीद जताई कि उन्हें अंततः इंसाफ़ मिलेगा।

हिंदी माध्यम का मतलब

11 अक्टूबर को केरल व तमिलनाडु के मुख्यमंत्रियों ने आधिकारिक भाषा पर संसदीय समिति के उस प्रस्ताव की निंदा की जिसमें हिंदी भाषी राज्यों में स्थित आईआईटी, आईआईएम, केंद्रीय विश्वविद्यालयों आदि में शिक्षा के माध्यम के रूप में हिंदी तथा अन्य क्षेत्रों में स्थित ऐसे संस्थानों में क्षेत्रीय भाषाओं को अपनाने के लिए कहा है। उन्होंने कहा कि ऐसा करना ग़ैर-हिंदी भाषी उम्मीदवारों के साथ अन्यायपूर्ण होगा। उन्होंने माँग की कि इन संस्थानों में प्रवेश परीक्षा 8वीं सूची की सभी भाषाओं में आयोजित की जानी चाहिए तथा हिंदी को सरकारी नौकरी के लिए अनिवार्य नहीं किया जा सकता है। ऐसा करना संविधान के विरुद्ध होगा। संविधान विविधता में एकता के उसूल के तहत राज्यों को अपने संदर्भों व ज़रूरतों के अनुसार शिक्षा संचालित करने की आज़ादी देता है। तमिलनाडु के मुख्यमंत्री ने चेताया कि ऐसे प्रस्ताव लोगों के दिमाग़ में आशंका पैदा करते हैं और भाषा-युद्ध को जन्म दे सकते हैं।

इस बीच, 16 अक्टूबर को मध्य प्रदेश में, कथित तौर पर त्रि-भाषा सूत्र के तहत, प्रधानमंत्री व राशिनी को श्रेय देते हुए, चिकत्सा विज्ञान की हिंदी पाठ-पुस्तकों को जारी किया गया। इस कार्यक्रम में पुस्तकों को मुख्यमंत्री के साथ देश के गृह मंत्री ने विमोचित किया। जेईई व नीट की प्रवेश परीक्षा में 12 भाषाओं व सीयूईटी में 13 भाषाओं के माध्यम होने का बखान करते हुए यह घोषणा की गई कि जल्द-ही इंजीनियरिंग व तकनीकी शिक्षा की हिंदी पाठ-पुस्तकें जारी की जाएँगी। मुख्यमंत्री ने, उतावलेपन में मंशा ज़ाहिर करते हुए, यह ऐलान किया कि आने वाले दिनों में आईआईटी व आईआईएम में हिंदी पढ़ाई जाएगी तथा हिंदी माध्यम विद्यार्थियों की योग्यता सूची अलग से तैयार की जाएगी। बाद में इन पाठ-पुस्तकों के निम्नस्तरीय होने की रपटें भी आईं। 18 अक्टूबर को, हिंदी-हिंदू के संकीर्ण व विभाजनकारी नारे को चरितार्थ करते हुए, राज्य के चिकित्सा शिक्षा मंत्री विश्वास सारंग ने यह घोषणा की कि धनतेरस पर राज्य के सभी मेडिकल कॉलेजों में स्वास्थ्य के हिंदू देवता धन्वन्तरि की पूजा की जाएगी! यह आयोजन हर साल होगा। मंत्री ने भोपाल व इंदौर के कॉलेजों की पूजा में ख़ुद उपस्थित रहने का इरादा जताया। यह आदेश डॉक्टरों तक ही नहीं, बल्कि मरीज़ों के रिश्तेदारों पर भी लागू होगा! मध्य प्रदेश को एक स्वस्थ राज्य बनाने के उद्देश्य से आदेश को वैध ठहराने की मूर्खतापूर्ण दलील देते हुए उन्होंने धर्मनिरपेक्षता के उल्लंघन के आधार पर इसके विरोध को यह कहते हुए ख़ारिज कर दिया कि धन्वन्तरि किसी धर्म से संबंधित नहीं हैं, बल्कि सबके हैं! जानकारों के लिए यह अंजाम अप्रत्याशित इसलिए नहीं था क्योंकि 16 अक्टूबर के हिंदी पाठ-पुस्तकों के राजकीय विमोचन कार्यक्रम में ही धन्वन्तरि व सरस्वती को सम्बोधित प्रार्थनाएँ आयोजित की गई थीं। यानी, चाहे हिंदी में उम्दा शिक्षा मिले न मिले, लोगों की सेहत के पुख़्ता इंतज़ाम हों न हों, यह निश्चित है कि लोगों के तन-मन-धन की क़ीमत पर धार्मिक अनुष्ठान के ठेकेदारों की सेहत बनी रहेगी।

शिक्षा और शिक्षकों पर हिंसक हमले

18 सितंबर को मणिपुर की भाजपा नेतृत्व सरकार ने एक आदेश जारी करके मणिपुर के इतिहास, संस्कृति व परंपरा तथा भूगोल से जुड़ी सभी **किताबों को प्रकाशित करने से पहले सरकार द्वारा नियुक्त एक समिति से अनुमति लेना**

अनिवार्य कर दिया। आदेश में बताया गया कि इस 15 सदस्यीय समिति में मणिपुर के शिक्षा मंत्री थाऊनाओजाम बसंता के अलावा कॉलेजों के सेवाकालीन व अवकाशप्राप्त शिक्षक तथा विश्वविद्यालयों के कुलपति शामिल होंगे। इस क़लमबंदी आदेश का उद्देश्य तथ्यों के खिलवाड़ को रोकना तथा विभिन्न समुदायों के बीच शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व को बिगड़ने से बचाना बताया गया। राज्य के अकादमिक जगत में इस आदेश की घोर आलोचना करते हुए कहा गया कि इससे अकादमिक आज़ादी सीमित होगी। इस आदेश के पीछे तात्कालिक संदर्भ सीआरपीएफ़ में प्रतिनियुक्ति पर रहे ब्रिगेडियर सुशील कुमार शर्मा का वह शोध था जिसके आधार पर लिखी अपनी किताब 'द कम्प्लेक्सिटी कॉल्ड मणिपुर: रूट्स, पर्सेप्शन्स ऐंड रिऐलिटी' में उन्होंने यह दावा किया है कि 1949 में भारत में विलय होने के वक़्त मणिपुर राज्य का क्षेत्रफल 700 वर्ग मील था।

30 सितंबर को बनारस स्थित महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ के राजनीति विज्ञान विभाग में **अतिथि शिक्षक मिथिलेश कुमार गौतम को सोशल मीडिया में यह टिप्पणी करने पर नौकरी से निकाल दिया** गया और परिसर में प्रवेश करने पर प्रतिबंधित कर दिया गया कि महिलाओं के लिए संविधान व हिंदू कोड बिल पढ़ना नवरात्रि पर व्रत रखने से ज़्यादा फ़ायदेमंद होगा। रजिस्ट्रार सुनीता पांडे ने अभाविप द्वारा 29 सितंबर को शिकायत दर्ज करने के कुछ घंटों के अंदर ही उन्हें नौकरी से निकालने के आदेश जारी कर दिए। भीम आर्मी महिला इकाई सहित कई दलित समूह विश्वविद्यालय के इस निर्णय की कटु आलोचना करते हुए शिक्षक के समर्थन में आगे आए।

17वीं शताब्दी में हुए आहोम सेना के सेनापति लाचित बोड़फुकन के 400वीं जन्म शताब्दी के दिल्ली आयोजित समारोह में 24 नवंबर को बोलते हुए **देश के गृह मंत्री ने विद्यार्थियों व शोधार्थियों से इतिहास के पुनर्लेखन का आग्रह किया**। उन्होंने कहा कि भारत के विभिन्न भागों में रहे ऐसे 30 साम्राज्यों के इतिहास को सामने लाने की ज़रूरत है जो 150 वर्षों से अधिक काल तक क़ायम रहे। अपने इतिहास बोध और ज्ञान का परिचय देते हुए, इस दौरान उन्होंने सराईघाट के युद्ध को औरंगज़ेब व बोड़फुकन के बीच हुआ बताया तथा इसे उत्तर-पूर्व की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत व आज इस क्षेत्र के भारत का अंग होने का श्रेय दिया! जबकि इसमें मुग़ल सेना का नेतृत्व राजा राम सिंह ने किया था; फिर न यह दावा मुग़ल साम्राज्य के विस्तार से मेल खाता है और ही आहोम राज्य के इतिहास व राजनैतिक चरित्र से।

28 नवंबर को मनिपाल इंस्टिट्यूट ऑफ़ टेक्नॉलोजी ने एक शिक्षक को अपनी कक्षा में एक **मुस्लिम पृष्ठभूमि के विद्यार्थी पर अभद्र टिप्पणी** करने के इलज़ाम की जाँच रपट आने तक कक्षा लेने से रोका। सोशल मीडिया पर आए वीडियो में देखा गया कि विद्यार्थी शिक्षक द्वारा आतंकवादी के रूप में संबोधित करने पर ऐतराज़ करते हुए उनके इसके एक मज़ाक होने के बचाव को ख़ारिज कर रहा है। संस्थान ने एक ट्वीट जारी करके कहा कि वो ऐसे व्यवहार को माफ़ नहीं करता है तथा संवैधानिक मूल्यों के प्रति व सबके साथ बराबरी का सुलूक़ करने को प्रतिबद्ध है। संस्थान की न्यायोचित प्रतिक्रिया के बावजूद, इस घटना में पीड़ित विद्यार्थी के सहपाठियों की ख़ामोशी एक चिंताजनक पहलू रहा।

3 दिसंबर को इंदौर के गवर्नमेंट न्यू लॉ कॉलेज के एक अभाविप सदस्य विद्यार्थी की शिकायत पर प्रिंसिपल व एक किताब (कलेक्टिव वायलेंस ऐंड क्रिमिनल जस्टिस सिस्टम) के लेखक तथा प्रकाशक अमर लॉ पब्लिकेशंज़ सहित **4 लोगों पर किताब में 'हिंदू समुदाय व आरएसएस पर आपत्तिजनक लेखन' होने की बिना पर मुक़दमा दर्ज** किया गया। शिकायतकर्ता की नज़र में फ़रहत ख़ान द्वारा लिखित इस किताब को पुस्तकालय में रखा जाना ही एक जुर्म था! यह किताब 2014 से ही पुस्तकालय में मौजूद थी, जबकि प्रिंसिपल प्रोफ़ेसर इनामुर रहमान ने 2019 में कार्यभार संभाला था। इस बात की परवाह किए बग़ैर कि कॉलेज के 28 शिक्षकों में से मात्र 4 मुस्लिम पृष्ठभूमि के हैं, अभाविप ने अपनी नफ़रती और गुंडई कार्रवाई को आगे ले जाते हुए कॉलेज पर मुस्लिम व इस्लामी संस्कृति के प्रचार व 'लव जिहाद' के आरोप लगाए। कोई हैरानी की बात नहीं है कि फिर दबाव में आकर प्रिंसिपल ने इस बारे में जाँच बिठाते हुए इन सभी शिक्षकों के कॉलेज आने पर रोक लगा दी तथा इस पुस्तक को किसी प्रक्रिया या जाँच-पड़ताल की औपचारिकता निभाए बिना ही हटा दिया गया। इसके बाद उन्हें अपना इस्तीफ़ा भी देना पड़ा। उधर प्रकाशक का कहना था कि उन्होंने तो आरएसएस से जुड़े एक वकील द्वारा 2021 में की गई 'माँग' पर ही सभी प्रतियों से 'आपत्तिजनक' अंश हटा दिए थे तथा लेखक ने भी मार्च 2021 में माफ़ी माँग ली थी। राज्य के गृह मंत्री ने ख़ुद इस शिकायत का संज्ञान लेते हुए पुलिस को मुक़दमा दर्ज करने के निर्देश दिए! 18 दिसंबर को सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश डी वाय चंद्रचूड़ व पी एस नरसिम्हा ने प्रोफ़ेसर इनामुर रहमान की गिरफ़्तारी

पर रोक लगा दी। मगर यह साफ़ है कि दक्षिणपंथी गुंडों की हिंसा के आगे विवेक व सुकून के साथ पढ़-लिख सकने की आज़ादी दुर्लभ होती जा रही है। अदालतों के अलावा इसका मुक़ाबला और अधिक व नए अंदाज़ में पढ़-लिख कर तथा मेहनतकश-आमजन की उन्नत चेतना के साथ ही किया जा सकता है।

27 दिसंबर को आई ख़बर के अनुसार आईआईटी गाँधीनगर के प्रशासन ने परिसर में आयोजित कला के एक कैम्प के दौरान स्वतंत्र चित्रांकन के लिए सुरक्षित दो **दीवारों पर भीमराव अंबेडकर, सावित्रीबाई फुले व फूलन देवी के चित्र उभरने पर उन्हें मिटा दिया**। इस कैम्प में नवंबर के प्रथम सप्ताह की दो रातों में परिसर की 12 दीवारों को चित्रित किया गया था। प्रशासन ने कलाकृतियों को मिटाने के पीछे यह कारण बताया कि इन दीवारों को स्थायी चित्रांकन के लिए नहीं, बल्कि दोबारा इस्तेमाल करने के लिए रखा गया है। वहीं, संस्थान की छात्र सीनेट ने यह कहकर प्रशासन का साथ दिया कि इन चित्रों के लिए उचित स्तर पर अनुमति नहीं ली गई थी और इनसे राजनैतिक तनाव पनपने की संभावना थी। दूसरी तरफ़ इन चित्रों के समर्थन में आगे आए विद्यार्थियों ने इस कार्रवाई के जातिगत भेदभाव से प्रेरित होने का आरोप लगाते हुए यह याद दिलाया कि प्रशासन इससे पहले भी फुले पर आयोजित एक कार्यक्रम को रोक चुका था। दमित वर्गों की चेतना की प्रेरक अभिव्यक्ति का यह दमन न केवल यह याद दिलाता और साबित करता है कि वो डरते हैं, बल्कि यह भी कि वो कितना डरते हैं!

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) के कारनामे

30 सितंबर को यूजीसी ने उच्च शिक्षा संस्थानों में विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञों को **'प्रोफ़ेसर्ज़ ऑफ़ प्रैक्टिस'** के नाम से नियुक्त करने के लिए दिशा-निर्देश जारी किए। इन विशेषज्ञों को शैक्षिक योग्यताओं की शर्तों से मुक्त रखा जाएगा और इनका भुगतान कॉरपोरेट प्रायोजन से किया जाएगा। गुणवत्ता की चिंता जताने वाली यूजीसी द्वारा इन कॉरपोरेट विशेषज्ञों पर विशेष कृपादृष्टि डालकर इन्हें प्रकाशन आदि मानकों से भी बरी रखा जाएगा! यह तय है कि ये कॉरपोरेट प्रोफ़ेसर्ज़ की प्रैक्टिस किसके हित में होगी। वैसे भी, राशिनी के निर्माता प्रधानमंत्री ख़ुद कह चुके हैं कि शिक्षा को उद्योग जगत की ज़रूरतों के अनुसार ढलना चाहिए।

15 अक्टूबर को सरकार ने विदेशी विश्वविद्यालयों को गुजरात स्थित गिफ़्ट सिटी (GIFT-City) में परिसर खोलने हेतु आकर्षित करने के लिए नियमों को अधिसूचित किया जिनमें **मुनाफ़े को वापस अपने मूल स्थान पर स्थानांतरित करने की सुविधा** शामिल है! वित्त मंत्री ने अपने बजटीय अभिभाषण में, विशेषकर वित्तीय सेवाओं व तकनीकी में उच्च-स्तरीय मानव संसाधन तैयार करने हेतु, विदेशी विश्वविद्यालयों को देसी क़ायदे-क़ानूनों से मुक्त रखने की घोषणा की थी। (तो यह है 'मानव संसाधन मंत्रालय' का नाम शुद्ध करके 'शिक्षा मंत्रालय' रखने और 'एक भारत' का राज़!) उसके 8 महीने बाद सरकार ने 500 क्यू एस वर्ल्ड यूनिवर्सिटीज़ सूची के संस्थानों को वित्तीय प्रबंधन, वित्तीय तकनीकी व स्टेम क्षेत्रों में कोर्स चलाने की अनुमति दे दी। तो इस देशभक्त सरकार ने इस तरह संविधान की आरक्षण नीति, फ़ीस नियंत्रण के अदालती आदेशों व शिक्षा में मुनाफ़े के विरुद्ध ख़ुद संसद द्वारा बनाए क़ानूनों व नियमों को धता बता दिया। यूजीसी ऐसे विश्वविद्यालयों व कॉलेजों को आकर्षित करने के लिए एक नियामक ढाँचा तैयार कर रही है। मज़ेदार बात यह है कि मुनाफ़े को बिना किसी रोक-टोक वापस संस्थान के मूल स्थान पर भेजने की छूट मुद्रा के बहिर्वाह रोकने के तर्क से मेल नहीं खाती है।

4 नवंबर को यूजीसी ने ऐसे संस्थानों को **मानद विश्वविद्यालय का दर्जा पाने के लिए ज़रूरी शर्तों में ढील** देने की घोषणा की जो 'देश की सामरिक ज़रूरत', 'भारतीय सांस्कृतिक विरासत या भाषाओं' आदि के संरक्षण पर केंद्रित हैं। 2019 के विनियमों को हटाकर लाए जा रहे 2022 के विनियमों के प्रारूप के तहत इन्हें उच्च शिक्षा संस्थानों के लिए ज़रूरी शर्तों से मुक्त रखा जाएगा। राशिनी के बहु-अनुशासनात्मक ढोल के विपरीत 'विशिष्ट संस्थान' के नाम से एकल विषयों को संबोधित ऐसे संस्थानों की एक नई श्रेणी बनाई जाएगी। इन संस्थानों को अब न NAAC से संबद्ध होकर 3 वर्षों तक लगातार 3 से ऊपर का CGPA हासिल करना पड़ेगा, न NIRF की उच्च श्रेणी में स्थान बनाना होगा, न 1:20 के शिक्षक-विद्यार्थी अनुपात का पालन करना होगा और न ही 20 वर्षों के अनुभव का प्रमाण देना होगा! ये तुच्छ व जानलेवा मानक तो केवल साधारण सार्वजनिक संस्थानों की ऊर्जा खपाने व मनोबल तोड़ने के लिए इस्तेमाल होते रहेंगे। अब शिक्षा मंत्रालय के बदले यूजीसी किसी भी मानद विश्वविद्यालय को अपने मुख्य परिसर से अलग केंद्र खोलने की अनुमति देने के लिए अधिकृत होगी।

9 नवंबर को यूजीसी अध्यक्ष ने घोषणा की कि पीएचडी शोधार्थियों के लिए जारी नई नियामवली के तहत **पीयर रीव्यूड जर्नल में पर्चे छपवाना अनिवार्य नहीं** होगा, हालाँकि नौकरी के आवेदन या पोस्ट-डॉक्टोरल अध्ययन के लिए इनका अपना मूल्य रहेगा। यह अंदाज़ा लगाया जा सकता है कि इस बदलाव का असल मक़सद दोयम दर्जे के जर्नलों द्वारा अनैतिक तरीक़े अपनाकर घटिया स्तर के पर्चे छापने के चलन को रोकने से कुछ अधिक है।

15 नवंबर को यूजीसी ने विश्वविद्यालयों को आदेश दिया कि वो 26 नवंबर को मनाए जाने वाले संविधान दिवस के अवसर पर, भारत के 'लोकतंत्र की जननी' होने के तौर पर, जश्न मनाने हेतु **'आदर्श राजा', 'खाप पंचायत' आदि 15 विषयों के माध्यम से लोकतांत्रिक परंपराओं पर व्याख्यान** आयोजित करें। यूजीसी अध्यक्ष ने तमाम राज्य सरकारों को लिखकर उनके अधीन आने वाले संस्थानों में भी इसे प्रेरित करने का अनुरोध किया। लोकतंत्र के प्रति इन विसंगतिपूर्ण विषयों को भारतीय ऐतिहासिक अनुसंधान परिषद द्वारा निकाली गई पुस्तक 'भारत: लोकतंत्र की जननी' से लिया गया था। इस आदेश को प्रधानमंत्री द्वारा तथाकथित 'वैदिक लोकतंत्र' पर अनैतिहासिक टिप्पणी को अकादमिक संस्थानों पर थोपने के चाटुकारी बहाने के रूप में भी देखा जा सकता है। वहीं, ऐसे आयोजन से संस्थानों में संविधान की प्रस्तावना को पढ़ने के निर्देश के खोखलेपन का भी सबूत मिलता है। कई महिला संगठनों ने इन विषयों के मूल में निहित स्त्री-विरोधी ऐतिहासिक तत्वों को चिन्हित करते हुए इस पूरी क़वायद को राशिनी प्रायोजित पितृसत्तात्मक अजेंडे के रूप में ख़ारिज किया।

8 दिसंबर को आई एक रपट के अनुसार यूजीसी ने स्नातक स्तर के कोर्सों के लिए **भारतीय भाषाओं में पाठ-पुस्तकें तैयार करने के लिए** अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशकों के साथ एक ऑनलाइन बैठक आयोजित की और एक समिति बनाई। इस काम के लिए 6-12 महीनों का समय तय किया गया। इसमें मुख्य काम अंग्रेज़ी में मौजूद पुस्तकों का अनुवाद करना होगा। जोकि, तेज़ी से विकसित होती हुई तकनीकी के चलते, कोई ऐसा भारी-भरकम काम नहीं लगता है। यह योजना इंजीनियरिंग व मेडिकल विज्ञान की मुख्यतः प्रथम वर्ष की पाठ-पुस्तकों का 12 भाषाओं में अनुवाद करने के फ़ौरन बाद तैयार की जा रही है। इस प्रक्रिया में यूजीसी पाठ-पुस्तकों, अनुवाद की तकनीकी व विशेषज्ञों का चयन करने में मार्गदर्शक की भूमिका निभाएगी।

संसार

16 सितंबर को हुई महसा अमीनी की मौत के बाद स्त्रियों पर अनिवार्य रूप से हिजाब सहित पहनावे की अन्य शर्तें थोपने के नियम-क़ानूनों के विरुद्ध उठे छात्र व महिला आंदोलन पर **ईरानी हुकूमत के दमन** के प्रति दुनियाभर के मानवाधिकार व अमन पसंद संगठनों ने चिंता ज़ाहिर की। शुरुआत से ही इन दमनात्मक कार्रवाइयों में कुर्दिस्तान, पश्चिमी अज़रबैजान व केरमानशाह जैसे प्रांतों के प्रदर्शनकारियों को निशाना बनाया गया। ईरान के धार्मिक व राजनैतिक नेतृत्व ने इन विरोध प्रदर्शनों के ख़िलाफ़ निर्मम रुख़ अपनाए रखा, जिसका अंजाम सैकड़ों मौतों में सामने आया। महिलाओं के नेतृत्व में चले इस आंदोलन में कई जगह छात्राओं व महिलाओं ने सार्वजनिक स्थलों पर अपने बाल काटकर और हिजाब को आग लगाकर विरोध दर्ज किया। इस आंदोलन ने दुनिया को एक नए नारे की ताज़गी और जोश की भेंट दी है - 'ज़न [औरत], ज़िंदगी, आज़ादी'। इस आंदोलन को कुचलने के लिए ईरानी सत्ता ने वही पैंतरे अपनाए जिनसे हम अच्छी तरह परिचित हैं - प्रबल विरोध के इलाक़ों में इंटरनेट काट देना, हज़ारों को गिरफ़्तार करना, कुछ को लापता कर देना, झूठे केस दर्ज करके बुद्धिजीवियों-कलाकारों को डराना-धमकाना, आंदोलनकारियों को ग़द्दार या दुश्मन के एजेंट बताकर जनता में बदनाम करना, शासक वर्ग के पक्ष में प्रति-जुलूस प्रायोजित करवाना आदि। कई कार्यकर्ताओं को देश छोड़कर जाने पर मजबूर होना पड़ा है, लेकिन पितृसत्ता, धर्म और राजकीय दमन के गठजोड़ के ख़िलाफ़ महिलाओं की आज़ादी और बराबरी का यह आंदोलन अन्यायपूर्ण सत्ता को हमेशा चुनौती देता रहेगा - ईरान में और हर जगह।

नवंबर के अंत में **चीन** के शिनजियांग उइगर के उरुमकी शहर में एक आवासीय परिसर में आग लगने से हुई कम-से-कम 10 लोगों की मौत ने कोरोना की सख़्त व निर्मम पाबंदियों के ख़िलाफ़ दर्जनों विश्वविद्यालयों में विद्यार्थियों के रोषपूर्ण प्रदर्शनों को जन्म दिया। विद्यार्थियों ने इस त्रासद घटना के पीछे अग्निशमन दस्ते की देरी तथा अतार्किक पाबंदियों को दोष दिया। कोरोना की पाबंदियों के ख़िलाफ़ उठा यह आंदोलन धीरे-धीरे तक़रीबन 50 कॉलेज परिसरों में चीनी एकाधिकारवादी

शासन व्यवस्था के विरुद्ध लोकतांत्रिक अधिकारों की माँग की आवाज़ में बदल गया। सिंगहुआ, सिचुआन व नानजिंग जैसे कई विश्वविद्यालयों में विद्यार्थी 'हमें लोकतंत्र, क़ानून का राज और अभिव्यक्ति की आज़ादी चाहिए' के नारों के साथ इकट्ठा होने लगे। सत्ता के निगरानी तंत्र के जवाब में विद्यार्थियों ने कोरे काग़ज़ों को हाथ में लेकर प्रदर्शन करने व कोरे संदेश भेजने जैसे नायाब सृजनात्मक तरीक़े अपनाए। आख़िरकार, शुरु के साफ़ इंकार के बाद सरकार को विद्यार्थियों की माँगों को आंशिक रूप से मानने में ही बढ़ते विरोध से बचने का रास्ता नज़र आया। दिसंबर के अंत में कोरोना की सबसे लंबी व सबसे सख़्त पाबंदियों को अचानक उठा लिया गया।

20 दिसंबर को **अफ़ग़ानिस्तान** में तालिबान शासन ने महिलाओं के विश्वविद्यालयों में पढ़ने पर पूरी तरह से रोक लगा दी। इसके पूर्व उन्होंने इंजीनियरिंग, अर्थशास्त्र, विज्ञान व कृषि जैसे विषयों को लड़कियों के लिए ग़ैर-ज़रूरी व अनुपयुक्त बताते हुए इनकी पढ़ाई पर रोक लगाई थी। कुछ महीने पहले, संभवतः महज़ दुनिया को दिखाने के लिए, लड़कियों को विश्वविद्यालयों की प्रवेश परीक्षा में बैठने की इजाज़त दी गई थी। इसमें हज़ारों छात्राओं ने बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया था। इस तरह, मार्च 2022 में माध्यमिक व उच्च स्तर की स्कूली शिक्षा के बाद अब विश्वविद्यालयों के द्वार भी छात्राओं के लिए बंद कर दिए गए हैं। इसके बाद काबुल विश्वविद्यालय में सांकेतिक विरोध-प्रदर्शन देखने को मिले। पूर्वी अफ़ग़ानिस्तान के शहर जलालाबाद में कुछ संवेदनशील व साहसी छात्रों ने परीक्षाओं का बहिष्कार करके अपना विरोध व छात्राओं के साथ अपनी एकजुटता प्रकट की। देश के कई हिस्सों में छात्राओं ने अपने साथी छात्रों से विरोध दर्ज करने के लिए कक्षाओं का बहिष्कार करने की अपील की। दिसंबर के अंत में, तालिबान के अति-निरंकुश व दमनकारी शासन से लोहा लेते हुए, काबुल विश्वविद्यालय के एक शिक्षक इस्माईल मशाल ने टीवी के एक प्रसारण के दौरान यह कहते हुए अपने शैक्षिक दस्तावेज़ फाड़ डाले कि उन्हें ऐसी शिक्षा मंज़ूर नहीं है जिसमें उनकी माँ और बहन को पढ़ने की आज़ादी नहीं है। इसके कुछ ही दिनों बाद, अपने अलोकतांत्रिक चरित्र का एक और सबूत देते हुए, तालिबान शासन ने इस्माईल के इस साहसिक प्रतिरोध का कायराना जवाब उन्हें हिरासत में डालकर दिया।

महिलाओं को दोयम दर्जे के इंसान मानने के धार्मिक दर्शन का सबूत देते हुए, तालिबानी शासन ने पार्क व खेल परिसर जैसे सार्वजनिक स्थलों पर उनके आने-जाने पर पहले-ही रोक लगा दी थी। साथ ही, न सिर्फ़ महिलाओं द्वारा संस्थाओं में नौकरी करने पर रोक लगा दी गई है, बल्कि इससे भी कहीं आगे जाते हुए विदेशी संस्थाओं को अपनी तमाम महिला कर्मियों को निकालने के आदेश भी दिए गए हैं। इसकी प्रतिक्रिया में कुछ संस्थाओं ने अफ़ग़ानिस्तान में अपने कार्यक्रम बंद करने का ऐलान किया है।

नोट: यह स्तंभ विभिन्न मीडिया रपटों के आधार पर तैयार किया गया है। इस अंक में हम मुख्यतः दिसंबर 2022 तक छपी रपटें ही इस्तेमाल कर पाए हैं।

प्री-मैट्रिक वज़ीफ़े को बंद करने वाले फैसले की निंदा: अभाशिअमं

अखिल भारत शिक्षा अधिकार मंच (AIFRTE) केंद्र सरकार के प्री-मैट्रिक वज़ीफ़े को बंद करने वाले फैसले की निंदा करता है। एक तरफ़ सरकार ने 8 लाख रुपये तक की वार्षिक आय वाले उच्च जातियों के परिवारों से आने वाले युवाओं के लिए आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग (ईडब्ल्यूएस) के संदिग्ध 'आरक्षण' की शुरुआत की थी, दूसरी तरफ़ अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति/अन्य पिछड़ा वर्ग के लिए कक्षा I से कक्षा VIII तक प्री-मैट्रिक छात्रवृत्ति को पहले 2.5 लाख रुपये से कम वार्षिक आय वाले परिवारों तक सीमित किया गया और फिर पूरी तरह बंद कर दिया। 2022-23 से लागू होने वाले इस निर्णय को इस आधार पर न्यायोचित ठहराने की कोशिश की जा रही है कि शिक्षा का अधिकार (आरटीई) अधिनियम, 2009 के अनुसार सरकारी स्कूलों में आठवीं कक्षा तक शिक्षा मुफ्त है! केंद्र सरकार इन छात्रवृत्तियों के मूल्य का 75% योगदान करती है, जबकि राज्य 25% योगदान करते हैं। इस एकतरफा फैसले से राज्यों के पास पालन करने के अलावा कोई विकल्प नहीं बचेगा। यह हमारे समाज के ऐतिहासिक रूप से भेदभाव का निशाना बने वर्गों के सबसे गरीब बच्चों के लिए शिक्षा के मौलिक अधिकार पर एक स्पष्ट हमला है। वित्तीय प्रोत्साहन के बिना, यहां तक कि पाठ्यपुस्तकों, वर्दी और विविध खर्चों को वहन न कर सकने के कारण भी, बच्चों को स्कूलों से बाहर और बाल श्रम में धकेल दिया जाएगा। इस अपरिहार्य परिणाम का फायदा उठाने के लिए सरकारी स्कूलों की प्रणाली के खिलाफ एक और आक्रमण शुरु किया जा रहा है। देशभर में स्कूलों को विलय-बंद करने की रणनीति इस आक्रमण का हिस्सा है। छात्रों को पढ़ाई छोड़ने पर मजबूर किया जाता है और संख्या में गिरावट आती है। इस विलय की नीति के माध्यम से कुछ स्कूलों में भीड़-भाड़ का बहाना बनाया जाता है, जबकि पड़ोस के स्कूलों को बंद कर दिया जाता है और उनके बुनियादी ढांचे और संपत्तियों को, अक्सर निजी एजेंसियों को, अन्य उद्देश्यों के लिए मोड़ दिया जाता है। अभाशिअमं मांग करता है कि भारत सरकार तुरंत इस घोर जनविरोधी और दुर्भावनापूर्ण निर्णय को वापस ले। वास्तव में बढ़ती मूल्य वृद्धि को देखते हुए, पहली से आठवीं कक्षा के लिए प्री-मैट्रिक छात्रवृत्ति को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि उत्पीड़ित वर्गों के बच्चे शिक्षा के मौलिक अधिकार से वंचित न हों।

*****

तालिबान द्वारा महिलाओं के लिए विश्वविद्यालय के दरवाजे बंद करने की निंदा: IMSD

IMSD ने तालिबान द्वारा महिलाओं के प्रति द्वेषपूर्ण फरमान की निंदा की है। IMSD ने प्रेस विज्ञप्ति जारी कर कहा कि तालिबान द्वारा सभी व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए अफगानिस्तान में महिलाओं की शिक्षा पर प्रभावी रूप से प्रतिबंध लगाना निंदनीय है। 2021 में जब से तालिबान ने सत्ता संभाली है, लड़कियां स्कूलों तक नहीं पहुंच पाई हैं। हालाँकि उन्होंने 23 मार्च से लड़कियों का स्कूल खोलने का वादा किया था; उसी दिन उन्होंने आदेश को रद्द कर दिया। इस साल 20 दिसंबर को, एक और फरमान जारी किया गया है जो महिलाओं को विश्वविद्यालयों से बाहर करता है। हमेशा की तरह, कोई कारण नहीं बताया गया; न ही उन्होंने यह संकेत दिया कि क्या यह केवल एक अस्थायी उपाय है। तालिबान ने स्कूलों के साथ जो किया है, उसे देखते हुए यह प्रतिबंध स्थायी प्रतीत होता है।

आईएमएसडी अंतरराष्ट्रीय समुदाय को याद दिलाना चाहता है कि दोहा में वार्ता के दौरान तालिबान ने वादा किया था कि अफगान महिलाओं ने शिक्षा के मामले में जो कुछ भी हासिल किया है, उसे वापस नहीं लिया जाएगा। जो लोग यह कह रहे थे कि तालिबान 2.0 अपने पहले संस्करण से अलग था, उन्हें अब इस कट्टर समूह को अपने निरंतर समर्थन की व्याख्या

करने की आवश्यकता है। भारतीय मुस्लिम समुदाय के जो लोग तालिबान के अधिग्रहण का जश्न मना रहे थे, उन्हें खुद से यह पूछने की जरूरत है कि क्या यही वह भविष्य है जिसकी वे आधी उम्माह के लिए कल्पना करते हैं। यह वह समय है जब मुस्लिम जगत को उठना चाहिए और इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि जब हम धार्मिक रूढ़िवादों को सशक्त करते हैं तो क्या होता है।

हम यह भी बताना चाहेंगे कि इस तरह के महिला विरोधी फरमानों को अपवाद के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए। मुस्लिम महिलाओं को शिक्षित नहीं करने के अब तेजी से हाशिए पर जाने वाले विचार की मुस्लिम जगत में एक लंबी वंशावली है। (इन) प्रसिद्ध देवबंदी, अशरफ अली थानवी, कभी नहीं चाहते थे कि महिलाओं को आधुनिक शिक्षा का एक अंश भी मिले। देवबंद तालिबान का आध्यात्मिक स्रोत है; इसलिए हमें आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि इसके वैचारिक वंशज स्कूलों और विश्वविद्यालयों सहित सभी सार्वजनिक स्थानों से महिलाओं को बाहर कर रहे हैं। आईएमएसडी का मानना है कि तालिबान की बुराइयों के खिलाफ लड़ाई बहुत ही मूलभूत विचारों पर सवाल उठाए बिना अधूरी होगी जो ऐसी पुरानी प्रथाओं को सूचित करते हैं।

IMSD अफगानिस्तान में सभी संघर्षरत महिलाओं और पुरुषों के साथ एकजुटता से खड़ा है, जो प्रतिगामी उलेमा के ऐसे बुरे फरमानों का विरोध कर रहे हैं। हम इस तथ्य का स्वागत करते हैं कि कतर, सऊदी अरब और तुर्की की सरकारों ने तालिबान के प्रतिगामी कदम की निंदा की है और अंतरराष्ट्रीय समुदाय से तत्काल हस्तक्षेप करने और इस घोर उल्लंघनकारी निर्णय को तुरंत वापस लेने की मांग करने की अपील की है। हम सभी भारतीय मुस्लिम संगठनों से भी अपील करते हैं कि वे तालिबान शासन की इस महिला विरोधी कार्रवाई की कड़ी निंदा करें।

*****

शिक्षण संस्थानों पर हमले : सबरंगइंडिया स्पेशल रिपोर्ट

साल 2022 जाने वाला है, इस दौरान पिछले दशक में शिक्षण संस्थानों में क्या हो रहा है, इसपर नजर डालना अनिवार्य है। इस दौरान हम देखते हैं कि किस तरह से ABVP ने 2014 में एक पैटर्न सेट किया जो 2016 से प्रभावी होकर अभी तक निरंतर जारी है।

भारत के शिक्षण कैंपस एक एजेंडे को लागू करने के लिए पसंदीदा स्थल बन गए हैं। रोहित वेमुला की संस्थागत हत्या (17 जनवरी, 2016) के साथ, जेएनयू कैंपस पर निरंतर और हिंसक हमला, उमर खालिद और कन्हैया कुमार (2016) को कैद करने सहित विरोध प्रदर्शनों का दमन फिर पोस्ट ग्रेजुएट छात्र नजीब का गायब होना जिसमें ABVP की स्पष्ट रूप से कथित भूमिका की जांच नहीं की गई है, इस बात के उदाहरण हैं कि इस शासन ने अपने पहले कार्यकाल में ही अपने इरादे स्पष्ट कर दिए थे। एफटीआईआई, पुणे, पांडिचेरी विश्वविद्यालय और हैदराबाद केंद्रीय विश्वविद्यालय (एचसीयू) पर भी लगातार हमले हुए, जिन्हें अधिकारियों ने किले का रूप दे दिया था।

यह सब वर्तमान सत्ताधारियों का पहला कार्यकाल था। अब, जैसा कि हम 2022 के अंत के करीब हैं, हम देखते हैं कि कैसे पिछले कार्यकाल की तरह अब भी ABVP को प्रतिरक्षा कवच मिला हुआ है। प्रतिष्ठित जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय (JNU) के परिसर से लेकर अहमदाबाद, गुजरात और मध्य प्रदेश तक, लक्षित घटनाओं को भड़काने में ABVP का हाथ दिखाई दे रहा है

पिछले आठ वर्षों में, केंद्र में भारतीय जनता पार्टी (बीजेपी) द्वारा अर्जित बहुमत के साथ, आरएसएस-संबद्ध, अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (एबीवीपी) की आक्रामक, अक्सर हिंसक, गतिविधियों को विशेष रूप से देश के विश्वविद्यालय

परिसरों में देखा गया है। पुलिसऔर सरकारों ने इनपर अंकुश लगाने में एक स्पष्ट नरमी प्रदर्शित की है, यह सुनिश्चित करते हुए कि वे पूरी तरह से बगैर भय के उद्दंडता कर सकते हैं।

4 दिसंबर, 2022: गुजरात में दो दौर के चुनावों के बीच, ABVP के सदस्यों ने अहमदाबाद स्थित HA कॉलेज के प्रधानाचार्य को "जय श्री राम" का नारा लगाने के लिए मजबूर किया और उनसे उन छात्रों से माफी मंगवाई जिन्हें उन्होंने चल रही कक्षा के दौरान नारे लगाने के लिए फटकार लगाई गई थी। टाइम्स ऑफ इंडिया ने सूत्रों के हवाले से बताया कि कुछ दिनों पहले, कुछ छात्रों ने कक्षा में पढ़ाई के दौरान 'जय श्री राम' के नारे लगाए थे। यह कॉलेज जीएलएस विश्वविद्यालय से संबद्ध है। शिक्षक ने पहले इन छात्रों को कक्षा में बाधा डालने के लिए फटकार लगाई थी और उन्हें कॉलेज के प्राचार्य संजय वकील के पास ले गए थे। वकील ने इन छात्रों को डांटा था और उनसे माफीनामा लिखवाया था। "शिक्षक बाद में उन्हें मेरे पास लाए और मैंने उन्हें डांटा भी। जीएलएस यूनिवर्सिटी के प्रोवोस्ट भालचंद्र जोशी ने कहा, "एबीवीपी से जुड़े कुछ छात्र प्रिंसिपल के कार्यालय में आए और हंगामा किया। उन्होंने 'राम धुन' का जाप करना शुरू कर दिया और धार्मिक भावनाओं को आहत करने के लिए प्रिंसिपल से माफी मांगने की मांग की।" जोशी ने कहा कि प्रिंसिपल ने उनसे यह कहते हुए माफी मांगी कि उनका किसी की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुंचाने का कोई इरादा नहीं था। इसके बावजूद एबीवीपी के सदस्यों ने उन्हें अपने साथ 'जय श्री राम' का नारा लगाने और उन छात्रों से माफी मांगने को मजबूर किया, जिन्हें उन्होंने पहले फटकार लगाई थी।

1/2 दिसंबर 2022: मध्य प्रदेश के इंदौर में एक लॉ कॉलेज के प्रिंसिपल को इस्तीफा देने के लिए मजबूर होना पड़ा। यह निर्णय, अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (एबीवीपी), आरएसएस से संबद्ध छात्र शाखा के सदस्यों के दबाव के कारण लिया गया था। उन्हें उनके तीन सहयोगियों के साथ धार्मिक समूहों के बीच दुश्मनी को बढ़ावा देने के लिए बुक किया गया था। उनकी पीड़ा 1 दिसंबर को शुरू हुई, जब एबीवीपी के सदस्यों ने एक ज्ञापन सौंपा, जिसमें आरोप लगाया गया कि "कॉलेज के चार मुस्लिम शिक्षकों द्वारा धार्मिक कट्टरपंथी विचारों को बढ़ावा दिया जा रहा है"। एक दिन बाद, संस्था के पुस्तकालय में 'सामूहिक हिंसा और आपराधिक न्याय प्रणाली' नामक एक पुस्तक रखे जाने को लेकर यह हंगामा किया गया। एबीवीपी के सदस्यों के मुताबिक किताब के कुछ हिस्सों में आरएसएस की छवि धूमिल की गई है।

1 दिसंबर, 2022: जीएन साईंबाबा की रिहाई की मांग को लेकर प्रदर्शन कर रहे दिल्ली विश्वविद्यालय (डीयू) के छात्रों का घेराव कर कथित तौर पर एबीवीपी के सदस्यों ने उन पर हमला किया, जिसमें कुछ छात्र घायल भी हुए। इसके बाद जब घायल छात्रों को अस्पताल ले जाया गया तो एबीवीपी के सदस्यों ने उस अस्पताल का भी घेराव किया। डीयू के पूर्व प्रोफेसर जीएन साईंबाबा की रिहाई की मांग को लेकर प्रदर्शन के दौरान अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (एबीवीपी) के 50 से अधिक सदस्यों द्वारा कथित तौर पर हमला किए जाने के बाद दिल्ली विश्वविद्यालय के लगभग पांच छात्र गंभीर रूप से घायल हो गए। क्विंट के अनुसार, राज्य दमन के खिलाफ अभियान (CASR) में शामिल छात्रों पर पहले पत्थरों और फिर लाठियों से हमला किया गया था।

2 दिसंबर 2022: को मध्य प्रदेश के एक कॉलेज में एबीवीपी की हठधर्मिता के कारण छह प्रोफेसरों को ड्यूटी से हटा दिया गया था। अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (एबीवीपी) की शिकायतों पर इंदौर स्थित शासकीय नवीन विधि महाविद्यालय (गवर्नमेंट न्यू लॉ कॉलेज) ने चार मुस्लिमों सहित छह शिक्षकों को अस्थायी रूप से ड्यूटी से हटा दिया। इन शिक्षकों को पांच दिनों तक कक्षाओं को पढ़ाने की अनुमति नहीं थी, जबकि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से जुड़े छात्र संघ के आरोपों की न्यायिक जांच की जा रही है, कॉलेज के प्रिंसिपल ने गुरुवार, 1 दिसंबर को कहा। यह कॉलेज में एबीवीपी इकाई के प्रमुख दीपेंद्र ठाकुर की शिकायत पर किया गया था, जिसने प्रिंसिपल डॉ इनामुर रहमान को दी गई शिकायत में आरोप लगाया था कि कुछ शिक्षकों ने प्रथम वर्ष के छात्रों के बीच 'धार्मिक कट्टरवाद और सरकार और सेना के बारे में नकारात्मक विचारों' को बढ़ावा दिया। आगे उन्होंने यह भी कहा कि शुक्रवार को प्रिंसिपल, मुस्लिम शिक्षक और छात्र नमाज अदा करते हैं और इस दौरान कक्षाएं नहीं लगती हैं।

30 अगस्त 2022: ABVP ने JNU रेक्टर पर आरोप लगाया कि उन्होंने छात्रों पर सुरक्षा गार्डों द्वारा 'हमला' कराया जिसके बाद उन्हें इस्तीफा देने के लिए मजबूर होना पड़ा। कथित तौर पर, छात्र संगठनों के साथ, एबीवीपी से जुड़े छात्र, 'लंबित' फेलोशिप अनुदान के वितरण की मांग कर रहे थे, पिछले हफ्ते जेएनयू सुरक्षा गार्डों के साथ संघर्ष हुआ था, दोनों पक्ष एक-

दूसरे के खिलाफ एफआईआर दर्ज कराने जा रहे थे। जबकि विश्वविद्यालय प्रशासन ने दावा किया कि छात्रों द्वारा दो गार्डों को "बेरहमी" से पीटा गया था, एबीवीपी जेएनयू इकाई ने घटना के बाद जारी एक प्रेस बयान में रेक्टर पर दोष मढ़ दिया।

एबीवीपी के बयान में कहा गया था, "यह ज्ञात होना चाहिए कि छात्रों पर यह हमला जेएनयू के डॉ. अजय दुबे के इशारे पर किया गया था, जो कि विश्वविद्यालय के रेक्टर भी हैं। जेएनयू रेक्टर अपने जेएनयू पते से दो 'अवैध' एनजीओ चलाने के मामले में पहले ही बेनकाब हो चुके हैं। "दो गैर सरकारी संगठन डायस्पोरा इनिशिएटिव्स (ODI) और अफ्रीकी अध्ययन संघ (ASAI) हैं, जो सवालों के घेरे में हैं। दुबे ने इन आरोपों का खंडन किया है।

30 जुलाई 2022: बीजेपी नेता की हत्या के विरोध में ABVP कार्यकर्ताओं ने कर्नाटक के गृह मंत्री के आवास (बेंगलुरु में जयमहल में ज्ञानेंद्र का बंगला) पर धावा बोल दिया। ABVP से जुड़े ये कार्यकर्ता BJYM नेता प्रवीण नेत्तर की हत्या का विरोध कर रहे थे, जिनकी मंगलवार को दक्षिण कन्नड़ जिले में हत्या कर दी गई थी। दक्षिण कन्नड़ जिले में भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) के युवा विंग के नेता की हत्या के विरोध में शनिवार को कर्नाटक के गृह मंत्री अरागा ज्ञानेंद्र के आवास में घुसने पर उन पर लाठीचार्ज किया गया।

10 जून, 2022: मैंगलोर विश्वविद्यालय के एक संघटक कॉलेज, हम्पांकट्टा के यूनिवर्सिटी कॉलेज में पॉपुलर फ्रंट ऑफ़ इंडिया (PFI) से संबद्ध कैंपस फ्रंट ऑफ़ इंडिया (CFI) और ABVP के बीच संघर्ष हुआ, जिसमें तीन छात्रों को एक अस्पताल में भर्ती कराया गया था। अस्पताल ने कहा कि उन्हें झड़प में मामूली चोटें आई हैं। कथित तौर पर 6 जून को कॉलेज की अनुमति के बिना एक कक्षा में ब्लैक बोर्ड के ऊपर कुछ छात्रों द्वारा वीर सावरकर और भारत माता के चित्र लगाने के मामले को लेकर झड़प हुई थी। कॉलेज ने अगले दिन पोर्ट्रेट हटा दिए। कुछ छात्रों ने प्राचार्य से तस्वीरों को लेकर शिकायत की थी और, छात्रों की तस्वीर लगाते हुए एक वीडियो क्लिप सोशल मीडिया पर वायरल हो गई थी।

23 मई, 2022: गोरखपुर विश्वविद्यालय में झड़पों की सूचना आज, जहां एबीवीपी ने कॉलेज फेस्ट में डीजे को 'पॉर्न स्टार' कहा। एबीवीपी के सदस्य मदन मोहन मालवीय यूनिवर्सिटी ऑफ टेक्नोलॉजी में कॉलेज फेस्ट की मेजबानी करने वाले डीजे ज़ाबिला के खिलाफ एक ज्ञापन जमा करने पहुंचे, जिसका शो उन्होंने 'अश्लील' होने का दावा किया था।

गोरखपुर विश्वविद्यालय में अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद के कार्यकर्ताओं द्वारा कथित तौर पर कॉलेज के उत्सव में सम्मिलित एक इंडोनेशियाई डीजे को "अश्लील" और "पोर्न स्टार" होने का दावा करते हुए परिसर में घुसने के बाद हुई झड़प में आधा दर्जन लोग घायल हो गए।

एबीवीपी ने विश्वविद्यालय के दो शिक्षकों सहित तीन के खिलाफ हत्या के प्रयास, मारपीट और दंगा करने का आरोप लगाते हुए पुलिस में शिकायत दर्ज कराई है। विश्वविद्यालय ने एबीवीपी कार्यकर्ताओं के खिलाफ भी शिकायत दर्ज की है। गोरखपुर के मदन मोहन मालवीय प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय (एमएमएमयूटी) ने इंडोनेशियाई डीजे, ज़बला को विश्वविद्यालय के वार्षिक सांस्कृतिक कार्यक्रम 'टेक श्रीजन 2022' में परफॉर्म के लिए आमंत्रित किया था। विभिन्न शैक्षणिक और सांस्कृतिक कार्यक्रम भी वार्षिक उत्सव का हिस्सा थे। एबीवीपी के आरोपों को निराधार और विश्वविद्यालय को बदनाम करने का प्रयास बताते हुए, कुलपति जेपी पांडेय ने विभिन्न मीडिया घरानों से कहा कि एबीवीपी कार्यकर्ता बिना किसी पूर्व सूचना के ज्ञापन जमा करने के लिए परिसर में घुस गए और आक्रामक तरीके से नारे लगाने लगे। उन्होंने कहा, "कॉलेज के अधिकारियों ने प्रदर्शनकारियों को शांत करने की कोशिश की, उन्हें मामले पर चर्चा करने के लिए आमंत्रित किया और उन्हें बताया कि उनके आरोप सही नहीं हैं।" पांडेय ने सीधे तौर पर आरोप लगाया कि एबीवीपी कार्यकर्ताओं ने शिक्षकों के साथ दुर्व्यवहार किया, जिससे विश्वविद्यालय के अन्य छात्र नाराज हो गए. पांडेय ने कहा, "विश्वविद्यालय के अंतिम वर्ष के छात्र शुभम चौरसिया को झड़प में गंभीर चोटें आईं।"

पांडेय ने कहा कि इस हिंसक झड़प के बाद परिषद से रिपोर्ट देने को कहा गया है। इसके अलावा, चार शिक्षकों की एक समिति को आयोजन के बारे में एबीवीपी की शिकायतों की जांच कर एक रिपोर्ट प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया है। इस समिति को 19 मई की घटना पर रिपोर्ट देनी थी। पांडे ने जिलाधिकारी को पत्र लिखकर समिति में एक प्रशासनिक

अधिकारी और एक पुलिस अधिकारी को नामित करने का अनुरोध भी किया है, ताकि निष्पक्ष जांच हो सके। कुलपति ने यह भी कहा कि विश्वविद्यालय ने भी छावनी पुलिस थाने में शिकायत दर्ज कराई है।

18 मई, 2022: लखनऊ विश्वविद्यालय के प्रोफेसर रविकांत चंदन, एक दलित विचारक, पर – दूसरी बार – शारीरिक हमला किया गया। यह हमला समाजवादी पार्टी के छात्रसंघ से जुड़े एक छात्र नेता द्वारा बुधवार, 18 मई को किया गया। ज्ञानवापी मस्जिद और काशी विश्वनाथ मंदिर में चल रहे विवाद के संबंध में हिंदुत्ववादी संगठनों द्वारा "अपमानजनक" मानी जाने वाली टिप्पणियों के बाद से चंदन को लगभग एक सप्ताह हो गया। आठ दिन पहले 10 मई को, उन्हें भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) की छात्र शाखा अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (एबीवीपी) के सदस्यों के शारीरिक हमले का सामना करना पड़ा था। नवीनतम हमला, 18 मई को, समाजवादी पार्टी की छात्र शाखा, समाजवादी छात्र सभा के कार्तिक पांडे द्वारा किया गया था। चंदन पर कैंपस में प्रॉक्टर ऑफिस के पास हिंदी विभाग में लेक्चर देने के बाद निकलने के कुछ देर बाद हमला किया गया था।

इस हमले ने परिसर में सभी को स्तब्ध कर दिया क्योंकि समाजवादी छात्र सभा ने कई अन्य छात्र निकायों और संकाय सदस्यों के साथ मंगलवार, 17 मई को प्रोफेसर चंदन पर एबीवीपी के हमले के खिलाफ लखनऊ विश्वविद्यालय के गेट पर विरोध प्रदर्शन किया और अपना समर्थन दिया।

10 अप्रैल 2022: वामपंथी छात्र संगठनों से संबद्ध छात्रों और आरएसएस से जुड़े अन्य लोगों के बीच संघर्ष हुआ। तत्कालीन जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय छात्र संघ (JNUSU) की अध्यक्ष आइशी घोष के समर्थकों और अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (ABVP) के सदस्यों के बीच हिंसा भड़क उठी। यह कैंपस में मांसाहारी खाना खाने को लेकर बवाल हुआ। वामपंथी सदस्यों ने एबीवीपी सदस्यों पर शाम को पथराव करने का भी आरोप लगाया जिसमें कुछ छात्र घायल हो गए। मेस सचिव पर भी एबीवीपी के छात्रों ने कथित तौर पर हमला किया था। पुलिस उपायुक्त (दक्षिण पश्चिम) मनोज सी ने कहा कि दोनों पक्षों के छह लोगों को मामूली चोटें आई हैं।

15 फरवरी, 2022: तंजावुर छात्र आत्महत्या मामले की जांच सीबीआई को सौंपे जाने की मांग को लेकर एबीवीपी सदस्यों ने मंगलवार को राष्ट्रीय राजधानी में तमिलनाडु भवन के बाहर विरोध प्रदर्शन किया। एबीवीपी दिल्ली के प्रदेश सचिव सिद्धार्थ ने एएनआई से बात करते हुए आरोप लगाया कि इस मामले के आरोपियों का जेल से छूटने के बाद राज्य सरकार के मंत्रियों ने स्वागत किया था। उन्होंने कहा, "स्वतंत्र जांच सुनिश्चित करने के लिए राज्य सरकार को खुद को जांच से दूर रखना चाहिए।" उन्होंने यह भी मांग की कि इसी मुद्दे को लेकर सीएम हाउस के बाहर प्रदर्शन करने पर गिरफ्तार किए गए एबीवीपी के सदस्यों को तुरंत रिहा किया जाए।

4 फरवरी, 2020: हमलों के बाद, ABVP, SFS के छात्रों ने पंजाब विश्वविद्यालय में विरोध प्रदर्शन किया। 'भारत माता की जय' और 'एसएफएस की गुंडागर्दी बर्दाश्त नहीं की जाएगी' के नारों के बीच विरोध प्रदर्शन किया गया। एबीवीपी के सदस्य बॉयज हॉस्टल नंबर 3 के बाहर हमले की निंदा करने के लिए इकट्ठा हुए, जिसमें शनिवार की शाम उसका एक सदस्य गंभीर रूप से घायल हो गया था। विरोध में एसएफएस के कई सदस्यों ने दावा किया कि हमला भद्दी और "महिला विरोधी" टिप्पणियों के जवाब में हुआ था, जिसमें एबीवीपी के छात्र दिव्यांश ने फेसबुक ग्रुप पर पोस्ट किया था (द इंडियन एक्सप्रेस द्वारा रिपोर्ट किया गया)। एसएफएस के कुछ सदस्यों ने विरोध प्रदर्शन के दौरान कहा, "हम उन लोगों को बर्दाश्त नहीं कर सकते हैं जो महिलाओं के साथ इस तरह का व्यवहार करते हैं और इस तरह की अपमानजनक टिप्पणियां पोस्ट करते हैं।"

शनिवार रात को हुए हमले के बाद, दिव्यांश ने पीयू एसएफएस के अध्यक्ष वरिंदर सिंह सहित एसएफएस के चार सदस्यों के खिलाफ प्राथमिकी दर्ज की। प्राथमिकी आईपीसी की धारा 323 (स्वेच्छा से चोट पहुंचाना), 341 (गलत संयम), 147 (दंगे के लिए), 141 (आपराधिक बल का प्रदर्शन) और 506 (आपराधिक धमकी) के तहत दर्ज की गई थी। इस घटना के बाद, SFS के एक छात्र, अंतरप्रीत सिंह, जिनका नाम भी प्राथमिकी में था, पर उस रात कुछ ABVP सदस्यों द्वारा बॉयज़ हॉस्टल नंबर 1 के बाहर कथित रूप से हमला किया गया था। "मैं लड़कों के हॉस्टल नंबर 1 के बाहर था जब उन्होंने मुझ पर हमला किया। उन्होंने मेरी पगड़ी फाड़ दी और कहा कि तुम 1984 में तो बच गए लेकिन अब नहीं बचोगे," अंतरप्रीत ने कहा।

घटना के संबंध में एक डीडीआर दर्ज किया गया था और पुलिस ने कहा, प्राथमिकी दर्ज करने से पहले जांच करने की जरूरत है।

31 जनवरी 2022: पुलिस ने कथित तौर पर एबीवीपी के दो विरोध प्रदर्शनों को नियंत्रित करने के लिए हिंसा का इस्तेमाल किया, जो मार्क्स कार्ड जारी करने में देरी का विरोध कर रहे थे। बेंगलुरु यूनिवर्सिटी पोस्ट ग्रेजुएट और रिसर्च स्कॉलर्स वाला एक अन्य संगठन हाल ही में एक जिला जज द्वारा रायचूर में 73वें गणतंत्र दिवस कार्यक्रम के दौरान डॉ. बीआर अंबेडकर की तस्वीर हटाने के लिए अधिकारियों को धमकाने की घटना की निंदा करते हुए विरोध प्रदर्शन कर रहा था। क्षेत्राधिकारी पुलिस अधिकारियों ने ऐसी किसी भी घटना से इनकार किया है।

शहर की पुलिस द्वारा अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (एबीवीपी) के प्रदर्शनकारी छात्र कार्यकर्ताओं को लाठियों से पीटने के बाद बैंगलोर विश्वविद्यालय के ज्ञानभारती परिसर में हिंसा भड़क उठी थी। हालांकि क्षेत्राधिकारी पुलिस अधिकारियों ने ऐसी किसी भी घटना से इनकार किया है!

15 दिसंबर, 2021: जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय (JNU) की एक घटना, दक्षिणपंथी छात्र संगठन अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (ABVP) के सदस्यों ने प्रसिद्ध जर्मन दार्शनिक फ्रेडरिक एंगेल्स के 19वीं शताब्दी के एक निबंध पर चर्चा करने के लिए छात्रों द्वारा आयोजित एक स्टडी सर्कल पर कथित रूप से हमला किया।

14 नवंबर, 2021: ABVP के सदस्यों, जिनमें से अधिकांश उच्च जाति के पुरुष थे, ने जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय छात्र संघ (JNUSU) कार्यालय, टेफ्लास में रात 9 बजे आयोजित होने वाले एक स्टडी सर्कल को बाधित कर दिया। फ्रेडरिक एंगेल्स के निबंध, समाजवाद, यूटोपियन और वैज्ञानिक पर हंड्रेड फ्लावर्स ग्रुप द्वारा। अपनी विभाजनकारी और हिंसक राजनीति के साथ, एबीवीपी अकादमिक अभ्यास को बाधित करने के लिए कूद पड़ी। कार्यालय पर जबरन कब्जा करने, अध्ययन मंडल के सदस्यों को रोकने और चर्चा को बाधित करने के बाद, एबीवीपी के सदस्यों ने उन छात्रों पर हमला किया जो सत्र में भाग लेना चाहते थे और अध्ययन करना चाहते थे। नवनियुक्त सदस्यों के साथ एबीवीपी के पदाधिकारियों ने कथित तौर पर महिलाओं को परेशान किया और कार्यालय में मौजूद कई छात्रों के साथ मारपीट की। जब कुछ छात्रों ने घायल छात्रों को अस्पताल ले जाने का प्रयास किया, तो एबीवीपी के सदस्यों ने जबरन आंदोलन को रोका और बेहोश हुए छात्र के साथ मारपीट की। अत्याचार की कहानी यहीं नहीं रुकी। जाति और लैंगिक असंवेदनशील अपशब्दों को चिल्लाने से लेकर लोकतांत्रिक संवाद को बाधित करने और मनमाने ढंग से एकतरफा हिंसा भड़काने तक, एबीवीपी के इन सदस्यों ने संपत्ति को नुकसान पहुंचाया, किताबें फाड़ीं और डफियां तोड़ दीं। उनकी नारेबाजी, जो रिकॉर्ड की गई है, आपत्तिजनक बयानों, जातिगत टिप्पणियों और उपहास से भरी हुई थी।

15 नवंबर की अगली शाम, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय छात्र संघ (जेएनयूएसयू) ने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ समर्थित अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (एबीवीपी) के कथित सदस्यों द्वारा छात्रों पर रविवार को किए गए हमले के विरोध में सोमवार शाम को एक रैली निकाली। विरोध रैली में सैकड़ों छात्रों ने हिस्सा लिया। जेएनयूएसयू ने आरोप लगाया था कि एबीवीपी से जुड़े छात्रों ने रविवार, 14 नवंबर को पढ़ने के सत्र के लिए जेएनयू यूनियन रूम बुक करने वाले छात्रों पर हमला किया था। हमले के दौरान कई छात्रों को चोटें आई थीं।

हमले के शुरू होने से ठीक पहले सोशल मीडिया पर पोस्ट किए गए एक बयान में, स्टूडेंट्स फेडरेशन ऑफ इंडिया (एसएफआई), जेएनयू ने कहा: "कैंपस में एबीवीपी की गुंडागर्दी की निरंतरता में - एक संगठन द्वारा वाचन सत्र आयोजित करने के लिए बुक किए गए यूनियन रूम को बंद कर दिया गया है। उनके द्वारा कब्जा कर लिया गया है। संगठन पिछले कुछ दिनों से इस सत्र के संचालन के लिए अभियान चला रहा है।" बयान में यह भी कहा गया है कि एबीवीपी के गुंडे कमरे से बाहर जाने से इनकार कर रहे थे और आपराधिक धमकी की रणनीति का सहारा ले रहे थे। "एसएफआई-जेएनयू सभी लोकतांत्रिक छात्रों से संघ कार्यालय पहुंचने और एबीवीपी के गुंडागर्दी से परिसर के लोकतंत्र की रक्षा करने का आह्वान करता है," इसने कहा।

29 अक्टूबर, 2021: एबीवीपी की डराने-धमकाने की रणनीति से एक स्पष्ट पैटर्न उभर कर सामने आया, जब अल्पसंख्यकों के खिलाफ नफरत फैलाने वाली एक ऐसी ही बड़ी घटना हुई, जिसके परिणामस्वरूप अल्पसंख्यक समुदायों के छात्रों के खिलाफ हिंसा हुई (29 अक्टूबर, 2021)। तब सेंटर फॉर वुमन स्टडीज, जेएनयू ने '2019 के बाद कश्मीर में जेंडर रेजिस्टेंस एंड फ्रेश चैलेंजेज' पर एक वेबिनार की घोषणा की थी। जिस शैक्षणिक संदर्भ में वेबिनार आयोजित किया जा रहा था, उसे समझे बिना एबीवीपी ने इसके खिलाफ शिकायत की और अपनी सामान्य चरमपंथी कथा शुरू कर दी। एबीवीपी द्वारा आयोजित एक विजय मार्च के बाद वेबिनार रद्द कर दिया गया, जो छात्रों को धमकियों और चेतावनियों से भरा था। दुर्व्यवहार और घृणा को अगले स्तर पर ले जाया गया जब ABVP सदस्यों ने कथित तौर पर अल्पसंख्यक छात्रों के साथ मौखिक रूप से दुर्व्यवहार किया।

16 जनवरी, 2020: एंटी-सीएए विरोध: एबीवीपी के सदस्यों ने विश्व भारती विश्वविद्यालय में हम पर हमला किया, कथित एसएफआई कार्यकर्ता; जिन दो छात्रों पर हमला किया गया, उन्होंने 8 जनवरी को भाजपा सांसद स्वप्न दासगुप्ता के एक विरोध प्रदर्शन में भाग लिया था। हालांकि, एबीवीपी ने अपनी संलिप्तता से इनकार किया और कहा कि कार्यकर्ता संगठन का हिस्सा नहीं हैं। विश्व भारती विश्वविद्यालय के दो छात्रों पर अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (एबीवीपी) के कार्यकर्ताओं ने कैंपस के अंदर सीएए विरोधी प्रदर्शन का समर्थन करने के लिए कथित तौर पर हमला किया था। स्टूडेंट्स फेडरेशन ऑफ इंडिया (एसएफआई) से जुड़े दो छात्रों ने 8 जनवरी को भाजपा सांसद स्वप्न दासगुप्ता के एक विरोध प्रदर्शन में हिस्सा लिया था। हालांकि, एबीवीपी ने अपनी संलिप्तता से इनकार किया है और कहा है कि कार्यकर्ता संगठन के सदस्य नहीं हैं।

अर्थशास्त्र विभाग के छात्रों - स्वप्ननील मुखोपाध्याय और फाल्गुनी पान के रूप में पहचाने गए - को कथित तौर पर पियर्सन मेमोरियल अस्पताल में भर्ती कराया गया। उनके मुताबिक, एबीवीपी सदस्य अचिंत्य बागड़ी और शब्बीर अली ने जब वे अपने हॉस्टल लौट रहे थे तो उन्हें लाठियों से पीटा और अस्पताल के अंदर उन पर हमला करने की कोशिश की। उन्होंने यह भी आरोप लगाया कि एक और हमले को रोकने के लिए गार्डों को अस्पताल के गेट को बंद करना पड़ा। 8 जनवरी को, SFI के सदस्यों ने नए नागरिकता कानून पर व्याख्यान देने के लिए दासगुप्ता को आमंत्रित करने के विश्वविद्यालय के फैसले का विरोध करने के लिए भाजपा सांसद दासगुप्ता, विश्व-भारती के कुलपति विद्युत चक्रवर्ती, और कई अन्य लोगों को सात घंटे से अधिक समय तक एक कमरे में बंद कर दिया।

5 जनवरी, 2020: जेएनयूएसयू का दावा, एबीवीपी के सदस्य जेएनयू के हॉस्टल में घुसे, छात्रों पर लाठियों से हमला किया। जेएनयू के साबरमती हॉस्टल, माही मांडवी हॉस्टल, पेरियार हॉस्टल के छात्रों पर रविवार शाम हमला किया गया। जेएनयूएसयू ने आरोप लगाया है कि यह हमला आरएसएस से जुड़े अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (एबीवीपी) ने करवाया था। जेएनयूएसयू ने ट्विटर पर कहा, "एबीवीपी के हमलावर, चेहरे को ढंके हुए, पाइप पर चढ़कर पेरियार हॉस्टल में घुसने की कोशिश कर रहे हैं," एबीवीपी के सदस्य मास्क पहने कैंपस में लाठियों, डंडों और हथौड़ों के साथ घूम रहे थे।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ समर्थित अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (एबीवीपी) और कुछ संकाय सदस्यों ने 5 जनवरी को प्रतिष्ठित जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय (जेएनयू) के छात्रों और शिक्षकों पर क्रूर हमला करने के लिए नकाबपोश भीड़ को परिसर में प्रवेश करने में मदद की। पुलिस ने जेएनयू हिंसा मामले को "दक्षिण" और "वाम" के बीच संघर्ष के परिणामस्वरूप चित्रित किया है, यह वास्तव में एक एबीवीपी के नेतृत्व वाला हमला था, जिसमें कुछ नव-नियुक्त संकाय सदस्यों द्वारा सहायता प्रदान की गई थी, जो भगवा छात्रों के समूह के प्रति सहानुभूति रखते थे और कुलपति एम. जगदीश कुमार द्वारा संचालित विश्वविद्यालय प्रशासन ने तब जेएनयूएसयू (जवाहरलाल नेहरू छात्र संघ) द्वारा कहा था। 5 जनवरी, 2020 को लगभग 6 बजे, स्कूल ऑफ बायोटेक्नोलॉजी (SBT) के सामने बैठे प्रदर्शनकारी छात्रों के एक समूह की ओर कुछ नकाबपोश गार्ड आक्रामक रूप से बढ़ते देखे गए। घबराए हुए छात्रों ने जेएनयूएसयू के पदाधिकारियों को कई एसओएस कॉल किए। जब जेएनयूएसयू अध्यक्ष आइशी घोष सुबह करीब 7 बजे वहां पहुंचीं तो नकाबपोश गार्डों ने कथित तौर पर उन्हें थप्पड़ मारा और मारपीट की। उन्होंने कहा कि एबीवीपी के कुछ छात्र भी प्रदर्शनकारी छात्रों को पीटने के लिए गार्डों के साथ शामिल हो गए। विभिन्न छात्रों के अनुसार, इस घटना के बाद, विरोध करने वाले समूह ने विरोध में एसबीटी के पास स्थित सीआईएस सर्वर सिस्टम के मुख्य स्विच को बंद कर दिया।

इस मामले में एबीवीपी के कूदने के तुरंत बाद स्थिति बिगड़ गई। परिसर में एबीवीपी नेताओं ने सुबह 10 बजे से दोपहर के बीच अपने सदस्यों को स्कूल ऑफ इंटरनेशनल स्टडीज के सामने लामबंद कर दिया। मून ने दावा किया कि तपन कुमार बिहारी, अश्विनी महापात्र, जाखलोंग बासुमतारी और नागेंद्र श्रीनिवास जैसे संकाय सदस्य ABVP के समर्थन में आए और उस समूह का नेतृत्व किया जिसने दिन भर कई महिलाओं सहित कई छात्रों पर हमला किया। उन्होंने यह भी आरोप लगाया कि उक्त शिक्षकों ने प्रदर्शनकारी छात्रों को पीटने के लिए बार-बार एबीवीपी कार्यकर्ताओं को उकसाया। जेएनयूएसयू के महासचिव सतीश चंद्र यादव पर भी इस भीड़ ने हमला किया था। उसी दिन, विश्वविद्यालय के विभिन्न स्थानों पर एबीवीपी की भीड़ जमा हो गई और बिना किसी उकसावे के कई छात्रों पर हमला कर दिया। आरोप है कि ये सब 23 दिसंबर से जेएनयू में तैनात पुलिसकर्मियों की मौजूदगी में हुआ।

जेएनयूएसयू ने कई एबीवीपी सदस्यों और कुछ फैकल्टी सदस्यों का भी नाम लिया, जिन्हें छात्रों पर हमलों में भाग लेते देखा गया था। इसने वीडियो भी जारी किए जो उन्हें भीड़ के हिस्से के रूप में दिखाते हैं, उनके खिलाफ जांच की मांग कर रहे हैं। इसमें जेएनयू प्रशासन द्वारा उस समय से भेजे गए ईमेल भी दिखाए गए जब रजिस्ट्रार ने सर्वर डाउन होने का दावा किया था। जेएनयूएसयू ने कहा कि सर्वर पूरे समय काम कर रहे थे और प्रदर्शनकारी छात्रों की वजह से उन्हें कोई गंभीर नुकसान नहीं हुआ। आज तक, वीडियो और इलेक्ट्रॉनिक फुटेज में एबीवीपी के नेतृत्व वाली भीड़ की आक्रामक गतिविधियों का खुलासा करने के बावजूद, न केवल निष्पक्ष जांच की गई है, बल्कि किसी को भी हिरासत में या गिरफ्तार नहीं किया गया है।

17 जनवरी, 2017: दिल्ली विश्वविद्यालय के परिसर को 'देशद्रोही' तत्वों से मुक्त करने के लिए अपना 'अभियान' चलाते हुए अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद ने विरोध कर रहे अन्य छात्रों पर हिंसक तरीके से हमला किया, जिसका विरोध आरएसएस से जुड़े संगठन ने रामजस कॉलेज में एक कार्यक्रम में किया था। स्टूडेंट्स फेडरेशन ऑफ इंडिया (SFI) ऑल इंडिया स्टूडेंट्स एसोसिएशन (AISA) ने एक सेमिनार को रद्द करने के विरोध में रामजस कॉलेज से मौरिस नगर पुलिस स्टेशन तक एक मार्च का आयोजन किया था, जिसमें जेएनयू के उमर खालिद को बोलना था। हिंदुस्तान टाइम्स ने तब कहा था कि दंगा नियंत्रित करने के लिए कम से कम 100 पुलिस कर्मियों को लाया गया था, जबकि द हिंदू ने यह भी बताया कि स्थिति को नियंत्रित करने के लिए पुलिस ने लाठीचार्ज का सहारा लिया।

जैसे ही दर्जनों उत्पातियों ने लाठियां भांजकर कॉलेज के अंदर घेरा डाला, कैंपस में अभिव्यक्ति की आजादी को कायम रखने के लिए मार्च में भाग लेने वाले छात्र और शिक्षक मैदान में फंस गए। उस समय NDTV की एक विस्तृत रिपोर्ट के अनुसार, कम से कम 20 लोग घायल हुए थे, और कुछ पत्रकार भी इस झड़प में फंस गए थे। जबकि ABVP ने छात्रों और शिक्षकों पर हमला करने से इनकार किया, शेहला राशिद, तत्कालीन उपाध्यक्ष, JNUSU, जिन्हें सेमिनार के लिए रामजस में भी आमंत्रित किया गया था, को NDTV ने यह कहते हुए उद्धृत किया, "हम पर हमला किया गया, पुलिस ने कुछ नहीं किया। हमारे छात्रों का खून बह रहा था। उन्होंने हम पर ईंटें फेंकी...उन्होंने महिलाओं के बाल खींचे।"

15 अक्टूबर, 2016: पीएचडी छात्र, नजीब, जो नई दिल्ली के प्रतिष्ठित जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय (जेएनयू) से बायोटेक्नोलॉजी में मास्टर डिग्री कर रहा था, का रहस्यमय ढंग से लापता होना। एक शाम - अक्टूबर 2016 में - अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (एबीवीपी) के आक्रामक सदस्यों के साथ मामूली विवाद के बाद, अगले ही दिन वह लापता हो गया। नजीब के दोस्तों ने साजिश का संदेह जताया और फातिमा ने अपने बेटे के साथ हुई घटना के बारे में स्पष्टीकरण मांगना शुरू कर दिया। एबीवीपी या उसके सदस्यों के खिलाफ कोई कार्रवाई नहीं की गई है।

मार्च-अप्रैल 2016: विरोध प्रदर्शनों का अपराधीकरण और उमर खालिद और कन्हैया कुमार को कैद करना (यह 2018 में दोहराया गया था और आज, खालिद एक गंभीर लक्ष्य बना हुआ है, नागरिकता अधिनियम 2019-एनपीआर-एनआरसी के विरोध में खतरनाक यूएपीए कानून के तहत कई महीनों से जेल में है।

17 जनवरी, 2016: हैदराबाद सेंट्रल यूनिवर्सिटी में आइकॉन छात्र रोहित वेमुला की संस्थागत हत्या (आत्महत्या) के कारण वाइस चांसलर अप्पा राव पोडिले के निलंबन पर लगातार विरोध हुआ। विरोध को कम करने और रोकने के लिए हर संभव प्रयास किया गया।

प्रतिरक्षा में राज्य की शह

ये सभी सूचीबद्ध घटनाएं भारत के शैक्षणिक परिसरों में एबीवीपी के बढ़ते दबदबे का उदाहरण हैं। यह प्रकट करती हैं कि कानून प्रवर्तन से तेज और निष्पक्ष कार्रवाई से प्रतिरक्षा राज्य सत्ता के साथ संगठन की निकटता से कैसे आती है। चाहे वह गुजरात, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, कर्नाटक, या दिल्ली की राजधानी हो - भारत के गृह मंत्रालय (एमएचए) के सीधे नियंत्रण में एक बल द्वारा नियंत्रित यह प्रतिरक्षा सत्ता में संगठनों की विचारधारा से बहती है।

स्वतंत्र और विश्लेषणात्मक विचारों की क्षमता के साथ युवा दिमाग पर सवाल उठाना, सोचना उस शासन के लिए खतरा है जो स्वतंत्र अभिव्यक्ति को नियंत्रित करने और राज्य और समाज को स्तरीकृत और नियंत्रित करने में विश्वास करता है।

यहाँ सभी उदाहरणों में, और जो यहाँ सूचीबद्ध नहीं हो सकते हैं, रणनीति सरल है। डराने-धमकाने और आतंक का माहौल बनाने के बाद एबीवीपी के सदस्य गाली-गलौज के साथ हिंसा का सहारा लेते हैं। उन्हें शायद ही कभी घेरे में लिया जाता है, कोई पुलिस कार्रवाई नहीं होती है, उन्हें कभी भी अभियोजन का सामना नहीं करना पड़ता है। उनकी विचारधारा के विरोधियों को एबीवीपी के पुरुषों और महिलाओं द्वारा "परिसर छोड़ने" के लिए "चेतावनी" दी जाती है। डराना-धमकाना आम बात है, गुंडागर्दी में उपहास, अश्लील इशारों, सेक्सिस्ट बोलचाल और यहां तक कि लैंगिक हिंसा, बलात्कार की धमकियों का इस्तेमाल भी शामिल है। भारत के अल्पसंख्यक समुदायों के छात्रों की आवाज के खिलाफ भड़काऊ और कलंकित नारों ने उन्हें और अलग-थलग कर दिया है। फिर भी, इन संगठित हमलों के बावजूद छात्र संगठनों ने विरोध किया है।

कभी सुरक्षित, विविधतापूर्ण, उद्दंड और जीवंत रहे भारत के परिसरों को आज नियंत्रित सैन्य शिविरों जैसे नियंत्रित और भयभीत संगठनों में परिवर्तित करने की मांग की जा रही है। कच्चे और लगातार राजनीतिक हमलों के बावजूद, जीवंतता अभी भी बनी हुई है, और लड़ाई अभी भी जारी है।

इन सभी मामलों को लेकर सीजेपी सचिव तीस्ता सेतलवाड़ कहती हैं:

"हां, अगर हम रोहित वेमुला की मौत (17 जनवरी, 2016), कन्हैया कुमार और उमर खालिद पर क्रूर हमला (फरवरी-मार्च 2016, फिर 2018 में), युवा नजीब (15 अक्टूबर को लापता हो गया) पर खूनी हमला और गायब हो जाना याद करें) और अम्बेडकर-पेरियार सर्कल, चेन्नई आईआईटी, एफटीआईआई, पुणे (महाराष्ट्र) और देश के कई विश्वविद्यालयों के युवा छात्रों के खिलाफ अनगिनत आपराधिक मामले दर्ज किए गए! हैदराबाद केंद्रीय विश्वविद्यालय के छात्रों और शिक्षकों पर भी क्रूरतापूर्वक हमला किया गया जब वे रोहित वेमुला की "संस्थागत हत्या" के बाद कुलपति के रूप में अप्पा राव पोडिले की वापसी का विरोध कर रहे थे। इस हिंसक गोरखधंधे के बीच, दिल्ली पुलिस ने विशेष रूप से उन शक्तिशाली लोगों से आदेश लेते हुए, जो उनके राजनीतिक आका हैं, पिछले साढ़े छह वर्षों में जेएनयू के छात्रों के खिलाफ क्रूर बल का प्रयोग किया है।"

नजीब नई दिल्ली के प्रतिष्ठित जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय (JNU) से बायोटेक्नोलॉजी में मास्टर डिग्री कर रहा था। वह एक तेज-तर्रार युवक था, जिसकी माँ को उज्ज्वल भविष्य की उम्मीद थी। लेकिन एक शाम - अक्टूबर 2016 में - अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (एबीवीपी) के आक्रामक सदस्यों के साथ मामूली विवाद के बाद, अगले ही दिन वह लापता हो गया। नजीब के दोस्तों ने साजिश का संदेह जताया और फातिमा ने अपने बेटे के साथ हुई घटना के बारे में स्पष्टीकरण मांगना शुरू कर दिया। लेकिन किसी के पास कोई जवाब नजर नहीं आ रहा था। पुलिस स्पष्ट नहीं कर सकी कि क्या हुआ। यह लगभग ऐसा था जैसे वह हवा में गायब हो गया!

उमर खालिद

जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय (जेएनयू) के एक पीएचडी स्कॉलर उमर खालिद - कभी अपनी अकादमिक प्रतिष्ठा के साथ प्रतिष्ठित थे, लेकिन अब इन्हें भगवा कुलपति द्वारा खोखला कर दिया गया है - पर, स्वतंत्रता दिवस से ठीक दो दिन पहले 13 अगस्त 2018 को संसद भवन से बमुश्किल 500 मीटर की दूरी पर हाई सुरक्षा क्षेत्र के भीतर स्थित संविधान क्लब

के परिसर के अंदर एक बंदूकधारी हमलावर ने हमला किया था। इस शर्मनाक घटना के बाद, हिंदुत्व खेमे के एक ट्रोल ने हमले का जश्न मनाया, "गोली मारने के असफल प्रयास की वास्तव में निंदा करता हूँ !! अगली बार उसे लिंचिंग करने की कोशिश करें... इस तरह के राष्ट्र-विरोधी तत्वों को जल्द से जल्द खत्म किया जाना चाहिए..."; क्या ये हत्या के लिए उकसाना नहीं है? उमर को 2016 में जेल में रहने के दौरान डराने-धमकाने का भी सामना करना पड़ा था।

कन्हैया कुमार

कन्हैया कुमार, जो आज एक सेलिब्रिटी यूथ आइकन हैं, को 17 फरवरी, 2016 को काले कोट में पुरुषों द्वारा बेरहमी से पीटा गया था और भारत के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा नियुक्त न्यायालय आयुक्तों के समक्ष अपनी परीक्षा का विवरण दिया था। (वरिष्ठ अधिवक्ता मिहिर देसाई ने सबरंगइंडिया को दिए एक साक्षात्कार में कहा था, वकील या गुंडा? चुनें, आप दोनों नहीं हो सकते)। इस साक्षात्कार में, देसाई ने कहा था, "कानूनी पेशे की नैतिकता के कई बुनियादी सिद्धांत हैं। दिल्ली के पटियाला हाउस कोर्ट में 15 और 16 फरवरी को हमने वकीलों को कानून हाथ में लेकर कन्हैया कुमार सहित महिलाओं और पुरुषों के साथ मारपीट करते हुए देखा।

******

एबीवीपी के गुंडों ने प्रोफेसर जी.एन. साईबाबा की रिहाई की मांग को लेकर कैंपस में प्रचार कर रहे छात्रों पर हमला किया: सबरंगइंडिया रपट

एबीवीपी के गुंडों द्वारा डंडों और ईंटों से हमला करने से कई छात्र घायल हो गए जिन्हें इलाज के लिए हिंदू राव अस्पताल ले जाया गया। एबीवीपी के छात्रों ने उस अस्पताल का भी घेराव किया जहां छात्रों को इलाज के लिए ले जाया गया था। घटना के बाद पुलिस पहुंची और आखिरकार एबीवीपी के हमलावरों को अस्पताल से "हटा" दिया। मौरिस नगर थाने के एसएचओ भी अस्पताल में मौजूद थे लेकिन अभी यह स्पष्ट नहीं है कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आरएसएस) से संबद्ध अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (एबीवीपी) में किसके खिलाफ प्राथमिकी दर्ज की गई है।

1 दिसंबर: भगत सिंह छात्र एकता मंच (BSCEM) द्वारा आयोजित एक विरोध प्रदर्शन के दौरान यह घटना हुई। खबरों के मुताबिक, राज्य द्वारा दमन के खिलाफ अभियान (CASR) के छात्र डीयू कैंपस में प्रचार कर रहे थे, जब उन पर कथित तौर पर पहले पत्थरों से हमला किया गया, फिर लाठियों से।

ऑल इंडिया फोरम फॉर राइट टू एजुकेशन (AIFRTE) से जुड़े शिक्षकों और प्रोफेसरों ने सबरंगइंडिया के साथ छात्रों पर हमले की तस्वीरें साझा कीं।

कानून के अंतिम वर्ष के छात्र और भगत सिंह छात्र एकता मंच के वर्तमान अध्यक्ष रविंदर सिंह ने मीडिया (एबीपी न्यूज़ और क्विंट) को बताया कि लगभग 10 से 12 छात्र जीएन साईंबाबा की अन्यायपूर्ण क़ैद के बारे में जागरूकता फैलाने के लिए एक अभियान चला रहे थे। अचानक से एबीवीपी के 40-50 छात्रों ने उन पर लाठियों से हमला कर दिया। उन्होंने कहा कि कई छात्र घायल हो गए। प्रदर्शनकारी राजवीर ने कहा कि उनके दोस्त को ईंट से मारा गया, जबकि दूसरे को नीचे गिराकर पीटा गया।

मीडिया रिपोर्ट्स के मुताबिक घायल छात्रों को तुरंत हिंदू राव अस्पताल ले जाया गया। अस्पताल में इलाज करा रहे छात्रों का आरोप है कि 40 से 50 लोगों ने अस्पताल का घेराव भी किया और उन्हें धमकाया।

जामिया मिलिया इस्लामिया से विधि स्नातक एहतमाम, जो अभियान का हिस्सा थे, ने दावा किया कि एबीवीपी ने कहा कि अगर वे अस्पताल से बाहर निकलते हैं, तो वे उन पर फिर से हमला करेंगे। उन्होंने कहा कि यह धमकी पुलिस अधिकारियों के सामने दी गई थी।

रविंदर ने कहा कि कुछ कथित हमलावरों के घुटनों पर आम आदमी पार्टी का झंडा बंधा हुआ था, लेकिन उन्हें यकीन था कि वे सभी एबीवीपी से थे।

पृष्ठभूमि:
5 जनवरी, 2020 को, राजधानी में CAA 2019 के विरोध के चरम पर, लाठी और ईंटों से लैस एक नकाबपोश भीड़ ने जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय (JNU) में छात्रों की पिटाई की और विश्वविद्यालय की संपत्ति को नुकसान पहुँचाया। उनमें से कई की पहचान एबीवीपी से सीधे तौर पर जुड़े लोगों के रूप में की गई थी; आज तक उन्हें गिरफ्तार नहीं किया गया है।

******

पैगंबर मोहम्मद की 14वीं सदी की पेंटिंग दिखाने पर कला प्रोफेसर की बर्खास्तगी निंदनीय: MPAC

मुस्लिम पब्लिक अफेयर्स काउंसिल (एमपीएसी) ने एक बयान में हैमलाइन विश्वविद्यालय से कला प्रोफेसर, एरिका, लोपेज़ प्रेटर की बर्खास्तगी की निंदा की। लोपेज़ प्रेटर को चौदहवीं शताब्दी के पैगंबर मुहम्मद को चित्रित करने वाली पेंटिंग दिखाने के चलते बर्खास्त किया गया था।

सभी रूपों की असहिष्णुता अकादमिक को प्रभावित करती है:

9 जनवरी, 2023 को मुस्लिम पब्लिक अफेयर्स काउंसिल (एमपीएसी) ने पैगंबर मुहम्मद को चित्रित करने वाली चौदहवीं शताब्दी की पेंटिंग दिखाने के आधार पर हैमलाइन विश्वविद्यालय से एक कला प्रोफेसर, एरिका लोपेज़ प्रेटर की बर्खास्तगी की निंदा की है। बयान केवल प्रोफेसर के समर्थन का बयान नहीं है, बल्कि विश्वविद्यालय से अपने फैसले को बदलने और स्थिति को सुधारने के लिए प्रतिपूरक कार्रवाई करने का भी आग्रह करता है।

समाचार सूत्रों की रिपोर्ट है कि कक्षा में पेंटिंग दिखाने की एक मुस्लिम छात्र द्वारा शिकायत की गयी थी जिसके बाद मामला विश्वविद्यालय प्रशासन तक पहुंचा। इसके बाद, विश्वविद्यालय में स्नातक छात्रों को प्रशासन से एक ईमेल प्राप्त हुआ जिसमें घटना को "निर्विवाद रूप से असंगत, अपमानजनक और इस्लामोफोबिक" घोषित किया गया। क्योंकि प्रोफेसर को एक सहायक के रूप में काम पर रखा गया था, उसका अनुबंध नवीनीकृत नहीं किया गया था और उसे प्रभावी रूप से निकाल दिया गया।

एमपीएसी कहता है, कि "मुस्लिम संगठन के रूप में, हम एक इस्लामी दृष्टिकोण की वैधता और सर्वव्यापकता को पहचानते हैं जो पैगंबर के किसी भी चित्रण को हतोत्साहित या प्रतिबंधित करता है, खासकर अगर एक अरुचिकर या अपमानजनक तरीके से किया जाता है। हालाँकि, हम इस ऐतिहासिक वास्तविकता को भी पहचानते हैं कि अन्य दृष्टिकोण मौजूद हैं और कुछ मुसलमान हैं, जिनमें विशेष रूप से Shī मुसलमान भी शामिल हैं, जिन्होंने पैगंबर का चित्रात्मक रूप से प्रतिनिधित्व करने में कोई हिचकिचाहट महसूस नहीं की है (हालांकि अक्सर उनके चेहरे को सम्मान से बाहर कर दिया जाता है)। यह सब इस्लामी परंपरा के भीतर महान आंतरिक विविधता का एक वसीयतनामा है, जिसे मनाया जाना चाहिए।

विडंबना यह है कि, ऐसा लगता है, यही वह बिंदु था जिसे डॉ. प्रेटर अपने छात्रों को बताने की कोशिश कर रहे थे। उसने उन्हें छवि के लिए पहले से ही सहानुभूतिपूर्वक तैयार किया, जो एक वैकल्पिक अभ्यास का हिस्सा था और एक सामग्री चेतावनी के साथ पूर्वनिर्धारित था। "मैं आपको यह छवि एक कारण से दिखा रहा हूं," प्रोफेसर ने जोर देकर कहा:

"यह आम सोच है कि इस्लाम किसी भी अलंकारिक चित्रण या पवित्र व्यक्तियों के किसी भी चित्रण को पूरी तरह से मना करता है। जबकि कई इस्लामी संस्कृतियां इस अभ्यास पर दृढ़ता से भड़कती हैं, मैं आपको याद दिलाना चाहता हूं कि कोई भी एकेश्वरवादी इस्लामी संस्कृति नहीं है"- डॉ प्रेटर।

बयान स्पष्ट है- "पेंटिंग इस्लामोफोबिक नहीं थी। वास्तव में, यह चौदहवीं शताब्दी के मुस्लिम राजा द्वारा पैगंबर का सम्मान करने के लिए कमीशन किया गया था, जिसमें फरिश्ता गेब्रियल से पहला कुरानिक रहस्योद्घाटन दर्शाया गया था।

"यहां तक कि अगर यह मामला है कि कई मुसलमान इस तरह के चित्रण से असहज महसूस करते हैं, तो डॉ. प्रेटर धार्मिक साक्षरता के एक प्रमुख सिद्धांत पर जोर देने की कोशिश कर रहे थे: धर्म प्रकृति में अखंड नहीं हैं, बल्कि आंतरिक रूप से विविध हैं। इस्लामोफोबिया का मुकाबला करने के लिए इस सिद्धांत की सराहना की जानी चाहिए, जो अक्सर इस्लाम को समतल करने और इस्लामी परंपरा को एक अनिवार्य और न्यूनतावादी तरीके से देखने पर आधारित होता है। प्रोफेसर को छात्रों, मुस्लिम और गैर-मुस्लिमों को समान रूप से शिक्षित करने में उनकी भूमिका के लिए और गंभीर रूप से समानुभूतिपूर्ण तरीके से ऐसा करने के लिए धन्यवाद दिया जाना चाहिए।

बयान में आगे कहा गया है, "बड़े पैमाने पर इस्लामोफोबिया के समय में, पैगंबर मुहम्मद की अत्यधिक आक्रामक और नस्लीय छवियां इंटरनेट और सोशल मीडिया पर लाजिमी हैं। हम इन छवियों को अनुपयुक्त मानते हैं और "काले चेहरे" या यहूदी-विरोधी कार्टून से भिन्न नहीं हैं; भले ही ऐसी छवियों और उनके निर्माताओं को कानून द्वारा संरक्षित किया गया हो, सामाजिक तिरस्कार उन सभी के कारण है जो उचित और सभ्य हैं। मुसलमानों के रूप में, निश्चित रूप से, हमें अपने धर्म के अनुसार शांत और शालीन तरीके से जवाब देना चाहिए:

"दयालुता के सेवक वे हैं जो पृथ्वी पर विनम्रता से चलते हैं, और जब अज्ञानी उन्हें [अपमानजनक शब्दों के साथ] संबोधित करते हैं, तो वे जवाब देते हैं, 'शांति।' (क्यू 25:63)

"पैगंबर मुहम्मद के इस्लामोफोबिक चित्रण की सर्वव्यापकता को देखते हुए, इस्लाम की संकीर्ण समझ का मुकाबला करने की कोशिश कर रहे एक कला प्रोफेसर को लक्षित करना शायद ही समझ में आता है। स्थिति में एक अचूक विडंबना है, जिसकी सराहना की जानी चाहिए। इसके अतिरिक्त, "इस्लामोफोबिया" लेबल का दुरुपयोग करने से शब्द को कम करने और कट्टरता के वास्तविक कृत्यों को बुलावा देने में इसे कम प्रभावी बनाने का नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

अंत में, हम इस्लामी परंपरा में शिक्षा के महत्व पर बल देते हैं। हमारे साझा इस्लामी और सार्वभौमिक मूल्यों के आधार पर, हम विश्वविद्यालय सेटिंग में स्वतंत्र पूछताछ, महत्वपूर्ण सोच और दृष्टिकोण विविधता की भावना पैदा करने की आवश्यकता की पुष्टि करते हैं।

जे.एन.यू. किसी विचारधारा का द्वीप नहीं है

पंकज चतुर्वेदी

जे.एन.यू. किसी विचारधारा का
द्वीप नहीं है
जिसमें वामपंथी छिपे हों

वे छिपे नहीं
तुम्हारे सामने हैं निष्कवच
सड़कों पर, चैनलों पर
देश के दूर-दराज़ इलाक़ों में
अपमान और
लांछन सहते हुए
भारत की
इन्द्रधनुषी संस्कृति को
बचाने के लिए
लड़ रहे हैं

और अगर नहीं लड़ रहे
तो एक ऐसे दौर में भी--
जब कुछ लोग गांधी के
हत्यारे की प्रतिमा
लगाना चाहते हैं--
उनके लिए यह
शर्म की बात है

वे अपने विचारों को
किताबों में दफ़ना नहीं देते
उनकी क़ीमत चुकाना
जानते हैं

चन्द्रशेखर की शहादत को
तुम मिटा नहीं सकते
इतिहास से

अच्छा किया जो तुमने
जे.एन.यू. पर चोट की

वह उस लड़ाई को
तेज़ कर सका
जो इस देश की
वंचित जनता
अपनी आज़ादी के लिए
लड़ रही है

यह साबित कर सका
कि वह किसी विचारधारा का
द्वीप नहीं है

सोनी सोरी कहती हैं :
"जे.एन.यू. भी अब मुझे
इस तरह महसूस होता है
कि बस्तर का
एक हिस्सा बन गया है।"

स्वामी, प्रकाशक व मुद्रक : श्री डोन्काडा रमेश पटनायक (संगठन सचिव, अखिल भारत शिक्षा अधिकार मंच),

11-4-169/1/ए, फ़्लैट नं० 306, प्लेज़ेंटअपार्टमेंट्स, रेडहिल्स, लकड़ी का पुल, ख़ैराताबाद, हैदराबाद 500004

फ़ोन : (040) 23305266, मो० : 0944980396,ईमेल : aifrte.secretariat@gmail.com

डेक्कन प्रेस, 1-9-1126/बी/ए, आज़माबाद, हैदराबाद 500020 से मुद्रित

अखिल भारत शिक्षा अधिकार मंच (अभाशिअमं) के न्यूज़लेटर 'तालीम की लड़ाई' की सामग्री का ग़ैर-व्यावसायिक सार्वजनिक इस्तेमाल किया जा सकता है, बशर्ते कि इसके स्रोत का संदर्भ दिया जाए।